॥ श्रीहरिः ॥

362▲

दिव्य सुखकी सरिता

(कल्याण-कुंज भाग-५)

गीताप्रेस गोरखपुर

GITA PRESS, GORAKHPUR

हनुमानप्रसाद पोद्दार

॥ श्रीहरिः ॥

दिव्य सुखकी सरिता

(कल्याण-कुंज भाग-५)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

हनुमानप्रसाद पोद्दार

॥ श्रीहरिः ॥

'शिव' का निवेदन

यह शिव-विचार-तरंगोंका पाँचवाँ भाग है। इसमें ऐसे विचार हैं, जिनमें दुःखरहित अनन्त अखण्ड दिव्य सुखकी सरिताका कल्याण-सुधामय प्रवाह है। पाठक इस सरितामें अवगाहन करें और इसके सुधा-रसका पान करके जीवनमें भगवान्‌का दिव्य भाव प्राप्त करें। यह निवेदन है।

॥ श्रीहरिः ॥

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ-संख्या

विषय		पृष्ठ-संख्या

॥ श्रीहरि: ॥

दिव्य सुखकी सरिता

शक्ति और शक्तिमान्‌में अभेद

याद रखो—जैसे अग्नि और अग्निकी दाहिकाशक्ति, सूर्य और सूर्यकी किरण, चन्द्रमा और चन्द्रमाकी चाँदनी एवं जल और जलकी शीतलता सदा एक हैं, इनमें कभी कोई भेद नहीं है, उसी प्रकार शक्तिमान् और शक्तिमें कोई भेद नहीं है। जैसे अग्निशक्ति अग्निस्वरूपके आश्रयके बिना नहीं रहती और जैसे अग्निस्वरूप अग्निशक्तिके बिना सिद्ध ही नहीं होता, उसी प्रकार शक्ति और शक्तिमान्‌का अविनाभाव एकत्व-सम्बन्ध है। वह नित्य पुरुषरूप है और यह नित्य ही नारी-स्वरूप। ऐसे दो होते हुए भी वे नित्य एक हैं। स्वरूपत: कभी दो होकर रह ही नहीं सकते। एकके बिना एकका अस्तित्व ही नहीं रहता।

याद रखो—पराशक्ति परब्रह्म परमात्मा शक्तिमान्‌के आश्रय बिना नहीं रहतीं; इसलिये वे 'परमात्मस्वरूपा' ही हैं। इसी प्रकार शक्तिमान् परब्रह्म पराशक्तिके कारण ही शक्तिमान् हैं, इसलिये वे नित्य 'पराशक्तिरूपा' ही हैं। इन दोनोंमें भेद मानना ही भ्रम है, परंतु इस प्रकार नित्य अभिन्न होनेपर भी इनमें प्रधानता शक्तिकी ही है।

याद रखो—'सच्चिदानन्दघन सर्वातीत तत्त्व भी 'सच्चिदानन्द-शक्ति' का अभाव हो तो 'शून्य' रह जाता है। इसलिये उसका सत्-तत्त्व सत्-शक्तिसे, चित्-तत्त्व चित्-शक्तिसे और आनन्द-तत्त्व आह्लादिनी-शक्तिसे ही स्वरूपत: सिद्ध है।

याद रखो—परमात्माकी इन्हीं शक्तियोंको संधिनी, संवित् और ह्लादिनी-शक्ति भी बतलाया गया है। अपनी जिस स्वरूपाशक्तिके द्वारा भगवान् सबको सत्ता देते हैं, उस शक्तिका नाम 'संधिनी' है, जिसके

द्वारा ज्ञान या प्रकाश दिया जाता है, वह 'संवित्' शक्ति है और स्वयं नित्य अनाद्यनन्त-परमानन्दस्वरूप होकर भी जिस शक्तिके द्वारा अपने आनन्दस्वरूपकी जीवोंको अनुभूति कराते हैं तथा स्वयं भी आत्मस्वरूप विलक्षण परमानन्दका साक्षात्कार करते हैं, उस आनन्दमयी स्वरूपाशक्तिका नाम 'ह्लादिनी' शक्ति है।

याद रखो—यह परमाश्चर्यमयी नित्य परमानन्दस्वरूप स्वरूपमयी ह्लादिनीशक्ति ही स्नेह, प्रणय, मान, राग, अनुराग, भाव और महाभावरूपमें भक्ति या प्रेम-शब्द-वाच्य होकर परम प्रेमसुधाका प्रवाह बहाती है और उसमें अवगाहन करके भक्त तथा भगवान् दोनों ही परमानन्दका अतृप्त पान करते हैं। यह सब शक्तिका ही चमत्कार है।

याद रखो—भगवान् विष्णु, भगवान् शंकर, भगवान् राम, भगवान् श्रीकृष्ण तथा अन्यान्य बड़े-छोटे किसीकी भी उपासना शक्तिरहित रूपमें हो ही नहीं सकती। जो शक्ति विष्णुको विष्णु, जो शक्ति शिवको शिव, जो शक्ति रामको राम और जो शक्ति श्रीकृष्णको श्रीकृष्ण बनाये हुए हैं, जिनके बिना उनकी स्वरूपसत्ता ही नहीं रहती, उन शक्तियोंके बिना जब वे शक्तिमान्‌रूप ही नहीं रहते, तब उनकी अकेलेकी—'शक्तिरहित शक्तिमान्' की उपासना कैसे हो सकती है? शक्ति न रहनेपर तो उनका स्वरूप ही नहीं रहेगा।

याद रखो—शक्तिको साथ माना जाय या न माना जाय, उपासनामें शक्तिका विग्रह साथ रखा जाय या न रखा जाय, जब उपासना होगी तब शक्ति साथ रहेगी ही। उसके बिना उपास्य तथा उसकी उपासना सम्भव ही नहीं।

याद रखो—इसी प्रकार अकेली पराशक्तिकी भी उपासना नहीं हो सकती। जब शक्ति शक्तिमान्‌में ही निवास करती है, तब शक्तिकी उपासनासे शक्तिमान्‌की उपासना भी स्वतः ही हो जायगी। अतएव वैष्णव, शाक्त और शैवोंमें वस्तुतः कोई भेद नहीं है। पुरुषरूप शक्तिमान्‌की उपासना करनेवाले स्वाभाविक ही शक्तिकी उपासना करते

हैं, चाहे अपनी जानमें न करें और इसी प्रकार शक्तिकी उपासना करनेवाले भी शक्त्याधार शक्तिमान्‌की उपासना करते हैं। अतएव मुख्य या गौण भेदसे किसी भी शक्तिमान् या शक्तिकी उपासना की जाय, यदि उसमें अनन्यभाव है तो वह एकमात्र सच्चिदानन्द-तत्त्वकी ही उपासना है।

याद रखो—तथापि पृथक्-पृथक् रूपोंमें तथा विभिन्न नामोंसे शक्तिकी उपासना की जाती है। वैष्णवजन भगवती लक्ष्मीकी, भगवती सीताकी, भगवती राधाकी उपासना करते ही हैं। शैव भगवती उमा-सतीकी—दुर्गाकी उपासना करते हैं और इसी प्रकार शाक्त भी भगवान् शिव तथा भैरवकी उपासना करते हैं। विशेष-विशेष अवसरोंपर भगवान् स्वयं उपदेश देकर भगवती देवीकी उपासना अपने भक्तोंसे करवाते हैं और भगवती स्वयं उपदेश देकर भगवान्‌की उपासना करवाती हैं तथा इससे उन्हें बड़ी प्रसन्नता प्राप्त होती है। भगवान् रामकी उपासनासे सीताको, भगवान् श्रीकृष्णकी उपासनासे राधाको, भगवान् श्रीविष्णुकी उपासनासे लक्ष्मीको और भगवान् श्रीसदाशिवकी उपासनासे पार्वतीको एवं इसी प्रकार भगवती सीताकी उपासनासे श्रीरामको, भगवती राधाकी उपासनासे श्रीकृष्णको, भगवती लक्ष्मीकी उपासनासे श्रीविष्णुको और पार्वतीकी उपासनासे श्रीमहादेवको अनिर्वचनीय सुखकी प्राप्ति होती है।

याद रखो—उपासनामें इष्टका रूप एक होना चाहिये, यह परम आवश्यक है। तथापि उस एककी प्रसन्नता-सम्पादनके लिये या उसके आज्ञापालनके लिये अन्य रूपकी उपासना करना भी कर्तव्य होता है। अर्जुनने भगवान् श्रीकृष्णकी आज्ञासे भगवान् शिवकी तथा 'एकानंशा' शक्तिकी उपासना की। स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने भगवान् शंकरकी उपासना की, भगवान् श्रीरामने स्वयं शक्ति तथा शिवकी उपासना की, श्रीशंकरने भगवान् विष्णु तथा रामकी एवं शक्तिकी आराधना की, गोपोंने अम्बिकाकी पूजा की, गोपरमणियोंने कात्यायनीकी

पूजा की; यादवोंने दुर्गापूजन किया एवं श्रीसीताजी और श्रीरुक्मिणीजीने अम्बिकापूजन किया। ये सब कथाएँ प्रसिद्ध हैं।

याद रखो—शक्ति और शक्तिमान्‌में अभेद मानते हुए ही जिनकी जिस रूपमें, जिस नाममें, जिस तत्त्वविशेषमें रुचि हो, जिसका जो इष्ट हो, उसको उसीकी उपासना उसीके अनुकूल पद्धतिसे करनी चाहिये। पर यह मानना चाहिये कि हमारे ही परम इष्टकी उपासना सभी लोग विभिन्न नाम-रूपोंसे करते हैं तथा हमारे ही परम इष्टदेव विभिन्न रूपोंको धारण किये हुए हैं।

सब ब्रह्मरूप है

याद रखो—मैं-तुम, यह-वह, सृष्टि-संहार आदि रूपसे जो दृश्यप्रपंच दिखायी दे रहा है, वह एकमात्र अद्वितीय नित्य निर्मल शान्त चिन्मय ब्रह्मकी ही अभिव्यक्ति है। इन समस्त सत्-रूपसे दीखनेवाले असत् पदार्थोंमें एकमात्र सत् परमात्मा ही प्रकट है। वह सच्चिदानन्दघन ब्रह्म ही यह सम्पूर्ण जगत् है। उसके अतिरिक्त जगत् नामकी कोई सत् वस्तु कभी न थी, न है।

याद रखो—आकाशकी शून्यता आकाश ही है, जलकी द्रवता जल ही है, प्रकाशकी आभा प्रकाश ही है, वायुका स्पन्दन वायु ही है, समुद्रकी तरंगें समुद्र ही है, बर्फकी शीतलता बर्फ ही है, काजलकी कालिमा काजल ही है—ठीक वैसे ही ब्रह्ममें दीखनेवाला यह समस्त जगत् भी ब्रह्म ही है।

याद रखो—जैसे स्वप्नमें दीखनेवाले दृश्य, बालकको दीखनेवाला बैताल, रज्जुमें दीखनेवाला सर्प, स्वर्णमें दीखनेवाले कड़े-बाजूबंद, प्रशान्त महासागरमें उठनेवाली तरंगें और आवर्त, मिट्टीमें दीखनेवाले घड़े-सिकोरे और आकाशमें दीखनेवाले नगर-घर आदि सब उपाधिमात्र हैं, भ्रममात्र हैं, वैसे ब्रह्ममें दीखनेवाला यह सम्पूर्ण जगत् भ्रममात्र है। वस्तुतः उसकी कोई भिन्न सत्ता है ही नहीं।

याद रखो—यह समस्त जगत् वस्तुतः भ्रान्तिसे ही जगत्-रूप दीखता है। यथार्थ तत्त्वका ज्ञान होनेपर यह जगद्भ्रम वैसे ही नष्ट हो जाता है जैसे रस्सीका ज्ञान होनेपर सर्पकी भ्रान्ति नष्ट हो जाती है अथवा आकार तथा नामकी व्यावहारिक विभिन्नता प्रतीत होते हुए भी जैसे स्वर्णका ज्ञान होनेपर स्वर्णभूषणोंके नाम-रूपके कारण होनेवाली विभिन्नता तथा भिन्नरूपता नष्ट हो जाती है—एकमात्र स्वर्ण ही दीखने लगता है, वैसे ही ब्रह्मका ज्ञान होनेपर विभिन्न नामरूपात्मक यह विशाल विश्व ब्रह्मरूप ही दीखने लगता है, कहीं भी कोई भिन्न सत्ता

रहती ही नहीं। वास्तवमें तो सच्चिदानन्दघन परमात्माके अतिरिक्त और कुछ है ही नहीं।

याद रखो—यह समस्त दृश्य जगत् तथा इसमें होनेवाली सभी क्रियाएँ चिदानन्दघन ब्रह्मका ही संकल्प है। वह संकल्प भी ब्रह्म ही है। ब्रह्म जगत्का कारण नहीं है; क्योंकि जगत्-रूपी कार्य सर्वथा असत् ही है। नित्य सत्य ब्रह्मसे अनित्य असत् जगत्की उत्पत्ति, नित्य निरतिशय दिव्य परमानन्दघन परमात्मासे दुःखपूर्ण जगत्की उत्पत्ति, प्रकाशमय परब्रह्मसे तमोमय जगत्की उत्पत्ति सम्भव ही नहीं। अतएव ब्रह्म तथा जगत्में कारण-कार्यभाव नहीं है, ब्रह्म ही जगत्-रूपमें भासित हो रहा है। उस चिदाकाशमें ही चिदाकाशसे यह सब खेल हो रहे हैं। उसके अतिरिक्त अन्य कुछ है ही नहीं।

याद रखो—जब एक ब्रह्मके अतिरिक्त कोई सत्ता ही नहीं रह जाती, तब भिन्न अहंकार कहाँ रहेगा और अहंकारका अभाव होते ही राग-द्वेष, ममता-मोह, मेरा-तेरा आदि सब मिथ्या विकार मिट जाते हैं, जैसे स्वप्नसे जागते ही स्वप्नका सारा संसार सर्वथा मिट जाता है। फिर जगत्में रहता हुआ भी इस ज्ञानको प्राप्त जीवन्मुक्त पुरुष नित्य-निरन्तर ब्रह्ममें ही स्थित रहता है। वह जगत्के आदि, मध्य, अन्त सभी अवस्थाओंमें समचित्त रहता है; क्योंकि तब उसका चित्त ही नहीं रह जाता। अतएव वह न तो प्राप्त हुई प्रिय कहलानेवाली वस्तुका अभिनन्दन करता है, न अप्रियसे द्वेष करता है, न नष्ट हुई प्रिय वस्तुके लिये शोक करता है और न अप्राप्त वस्तुकी इच्छा ही करता है।

याद रखो—ऐसा परमतत्त्वको प्राप्त—परमात्मामें अभिन्नभावसे स्थित पुरुष जगत्की क्षणभंगुर अवस्थाको अपनी प्रशान्त ब्राह्मी स्थितिके अन्दर हँसता हुआ देखता है। उसके लिये न कुछ पाना शेष रह जाता है, न कुछ करना रह जाता है। वह सर्वव्यापी परब्रह्म परमात्मस्वरूप ही बन जाता है। यही योगवासिष्ठकी शिक्षा है।

जीव भगवान्‌का सनातन अंश

याद रखो—तुम शरीर नहीं हो; तुम सच्चे अर्थमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और पिता, पुत्र, पति, गुरु, पत्नी, माता आदि नहीं हो। तुम हो सच्चिदानन्द आत्मा या तुम हो भगवान्‌के सनातन अंश।

याद रखो—यह शरीर तथा इस शरीरके सम्बन्धको लेकर कहे जानेवाले नाम सब कल्पित हैं और हैं केवल लोगदेखाऊ या कामचलाऊ—व्यावहारिक जगत्‌में केवल व्यवहारके लिये। ये न तुम्हारा स्वरूप हैं, न इनसे तुम्हारा कोई सम्बन्ध है।

याद रखो—शरीरको तथा शरीरके सम्बन्धसे कहे जानेवाले नामोंको अपना स्वरूप मान लेनेके कारण ही शरीरमें तथा प्राणिपदार्थोंमें तुम्हारी अहंता, ममता, आसक्ति हो गयी है तथा इनकी कामना-वासनामें फँसकर तुम बिना हुए ही दुःखी हो रहे हो और यह दुःख जबतक इस शरीर तथा शरीरके सम्बन्धसे कहे जानेवाले नामोंमें स्वरूप-बुद्धि रहेगी, तबतक मिटेगा ही नहीं—चाहे बाहरी स्थिति कुछ भी, कैसी भी क्यों न हो जाय।

याद रखो—इस मिथ्या मान्यताके कारण ही ममता, आसक्ति, कामनाके वश हुए तुम नाना प्रकारकी अनन्त आशाकी फाँसियोंसे बँधे हुए हो, इन्हींके कारण तुम काम-क्रोध-लोभपरायण हुए भाँति-भाँतिके नये-नये पाप कर रहे हो और इसीलिये जीवनके अन्तिम क्षणतक तुम हजारों-लाखों नयी-नयी चिन्ताओंकी ज्वालासे जलते रहते हो। परिणामस्वरूप तुम्हें तीन चीजें हाथ लगती हैं—(१) दिन-रातकी चिन्ताज्वाला, (२) कामना-पूर्तिके लिये किये जानेवाले पापोंका संग्रह और (३) जन्म-मृत्युके चक्रमें ही डाले रखनेवाली मानव-जीवनकी असफलता।

याद रखो—तुमको मनुष्य इसलिये नहीं बनाया गया कि तुम अपनी बुद्धिका दुरुपयोग करके जन्म-मृत्युके चक्रको और भी लम्बा

कर लो, अज्ञानके बन्धनको और भी सुदृढ़ कर लो, आसुरी योनियों तथा अत्यन्त पीड़ादायक नरकादिमें पचनेकी और भी निश्चित सुव्यवस्था कर लो। तुम्हें तो यह मानवशरीर मिला था—जन्म-मृत्युके चक्रसे छूटकर अपने सत्य नित्य चिदानन्दघन आत्मस्वरूपकी प्राप्ति या भगवान्‌की प्राप्तिके लिये, समस्त बन्धनोंको सदाके लिये काट डालनेके लिये और नित्य-निरन्तर भगवान्‌में ही स्थिति प्राप्त करनेके लिये।

याद रखो—अब भी समय है, अब भी चेतकर सन्मार्गपर आनेसे काम बन सकता है। अब भी मानव-जीवन सफल हो सकता है। तुम आज ही, अभी इस सत्यको समझकर इसे स्वीकार कर लो और शरीर तथा शरीरके सम्बन्धसे कहे जानेवाले नामोंमें स्वरूपकी मिथ्या कल्पना छोड़ दो एवं अपनेको नित्य-सत्य-चिद्घन आत्मा समझ लो या भगवान्‌की लीलामें सेवा करनेवाला एक भगवान्‌का अनन्य सेवक मान लो। फिर तुम्हारी जगत्‌के प्राणिपदार्थोंमें ममता, आसक्ति तथा उनके लिये आशा और उनमें कामना नहीं रहेगी; फिर, व्यावहारिक जगत्‌में सारे काम होंगे या तो स्वप्नकी तरह या भगवान्‌की पवित्र सेवाके रूपमें।

याद रखो—ऐसा होते ही तुम्हारी सारी चिन्ताएँ दूर हो जायँगी, पापकी कल्पना तुम्हारे चित्तके समीप भी नहीं आ सकेगी और तुम यहीं आत्मस्वरूप या भागवत-जीवनमें सुप्रतिष्ठित होकर जीवनकी परम और चरम सफलता लाभ करोगे।

वैराग्यवान् पुरुष ही सुखी

याद रखो—जबतक संसारके भोगपदार्थोंमें सुखकी भ्रान्ति है और इस कारण जबतक संसारके प्राणी-पदार्थोंमें ममता और आसक्ति है, तबतक न तो सच्ची भक्ति प्राप्त होगी, न ज्ञान ही मिलेगा और न योगसाधना ही सिद्ध होगी। निष्काम कर्मका साधन भी बिना विषय-वैराग्यके नहीं हो सकता।

याद रखो—आसक्ति मनमें होती है और उसका त्याग भी मनसे ही होता है। इसलिये न 'वैरागी' या 'वीतरागी' नाम रखनेसे विषयासक्तिका त्याग होता है न बाहरी त्यागसे। नाम रखना और वस्तुतः वैराग्यकी इच्छा न करना तो दम्भ है। परंतु जबतक मनमें विषयोंकी ओर आकर्षण है, विषयोंमें सुखकी कल्पना है, विषय-सुखकी वासना है, तबतक 'वैराग्य' नहीं है।

याद रखो—जबतक विषय-सुखकी भ्रान्ति तथा उसकी वासना रहेगी, तबतक बाहरसे त्याग करनेपर भी विषयके सामने आनेपर अथवा विषयकी स्मृति होनेपर उसे प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न हो जायगी, जो बाह्य-विषय-त्यागी पुरुषको भी विषय-सेवनमें लगा देगी और उसका पतन हो जायगा।

याद रखो—विषयमें सुख है ही नहीं, दुःख-ही-दुःख है। संसारमें खान-पान और कपड़ा-लत्ता तथा घर-मकान तो जीवन-निर्वाहके लिये हैं और यह मानव-जीवन है भोगोंमें वैराग्य प्राप्त करके भगवत्प्राप्ति या स्वरूप-साक्षात्कारकी साधनाके लिये। जीवन-निर्वाहके लिये इन वस्तुओंका ग्रहण है, इनके लिये जीवन कदापि नहीं है। अतएव जो स्वाद-शौकीनीके लिये भोजन-वस्त्रादिका सेवन करता है, वह विषयासक्त मनुष्य सर्वथा विरागहीन है और उसे संसारमें बँधे ही रहना पड़ेगा।

याद रखो—जैसे ये विषय शरीरनिर्वाहके लिये हैं, वैसे ही यह शरीर भी जीवात्माके रहनेभरके लिये है। यह तुम्हारा स्वरूप नहीं है।

इस शरीरमें होनेवाली बाल, युवा, वृद्धावस्थाको जाननेवाला आत्मा सदा एक-सा रहता है। तुम कहते हो, 'मैं पहले बालक था, यों खेलता था; जवानीमें मेरे शरीरमें बड़ी शक्ति थी, अब बुढ़ापेमें मैं शक्तिहीन हो गया।' यों कहनेवाले तुम आत्मा इस शरीरसे पृथक् हो, यह सिद्ध है। यों समझकर इस शरीरसे आसक्ति-ममताका त्याग करो और जबतक शरीर है, तबतक समबुद्धिसे प्राप्त भोगोंका भोग करते हुए इसे भगवत्साधनामें सहायक बनाये रखो।

याद रखो—तुम्हारा जब भगवान्में अनुराग हो जायगा या आत्मस्वरूपमें तुम्हारी स्थिति हो जायगी, तब तो तुम भोगोंको विषकी भाँति या स्वप्नराज्यकी भाँति स्वयमेव ही त्याग दोगे। परंतु पहलेसे ही उनमें बार-बार दोष-दुःख देखकर और उन्हें बन्धनका परम कारण मानकर उनकी आसक्तिका त्याग करो।

याद रखो—असली त्याग तो मनकी भोगासक्तिके त्यागमें ही है और वही सच्चा वैराग्य है। परंतु जहाँतक बने, विषयसेवन कम-से-कम करो; विषयोंमें रमणीयता तथा सुखका बाध छोड़कर उनका केवल आवश्यकता होनेपर ही सेवन करो। भोगोंका संग्रह-परिग्रह भी भोगोंकी आसक्तिको बढ़ानेवाला है। भोगासक्त तथा भोगसम्पन्न मनुष्योंकी ओर मत देखो, देखो विषयविरागी-त्यागी महात्माओंकी ओर। संग करो उन विषयविरागी महात्माओंके चरित्रों और उपदेशोंका, जिससे भोगरूपी मीठे विषके प्रति तुम्हारे मनमें अनास्था, अनासक्ति पैदा होकर उनमें यथार्थ वैराग्य हो जाय।

याद रखो—भोगी पुरुष सदा ही भय और विषादके जालमें फँसा रहेगा—प्राप्त भोगके नाशका भय और नाश हो जाने या न मिलनेपर महान् विषाद और शोक। परंतु जिसकी भोगोंमें आसक्ति नहीं है, वह सदा निर्भय और शोकरहित एवं परमानन्दमें रहेगा। वैराग्यवान् पुरुषको कोई भी परिस्थिति दुःखी नहीं बना सकती।

परम ध्येय

याद रखो—तुम संसारमें इसलिये मनुष्य बनकर नहीं आये हो कि दिन-रात शरीरके आराम तथा कल्पित नामके यशके लिये ही प्रयत्नशील रहो और मोहमें अंधे होकर ऐसे कुकर्मोंमें लगे रहो कि जिनके फलस्वरूप असंख्य जन्म-जन्मान्तरोंतक फिर कभी मनुष्य बननेका अवसर ही न आवे।

याद रखो—तुम नित्य सच्चित्स्वरूप आनन्दमय आत्मा हो, सच्चिदानन्दघन भगवान्‌के सनातन अंश हो। अपने इस स्वरूपको भूलकर तुम अपनेको अमुक नामवाला शरीरधारी मनुष्य मान रहे हो और इस शरीरमें तथा शरीरसम्बन्धी प्राणी-पदार्थोंमें ही राग-द्वेष करके दिन-रात भय-विषादकी भट्ठीमें जल रहे हो। जीवनभर एक क्षणके लिये भी तुम्हें कभी यथार्थ आनन्द तथा सच्ची शान्तिके दर्शन नहीं होते। अपनी इस मिथ्या कल्पना तथा भ्रमजनित बुरी स्थितिपर विचार करो और गहराईसे सोचकर अनुभव करो कि तुम यह शरीर नहीं हो, तुम यह नाम भी नहीं हो।

याद रखो—जबतक तुम इस शरीर और नामको ही अपना स्वरूप मानते रहोगे, तबतक तुम्हें कभी सुख होगा ही नहीं; क्योंकि यह शरीर तथा इसके सम्बन्धी सभी प्राणी-पदार्थ अनित्य, परिवर्तनशील, क्षणभंगुर तथा अपूर्ण हैं। इनका वियोग और विनाश होगा ही। तुम्हारा जो अनन्त, नित्य, शाश्वत स्वरूप है, वह नित्य अविनाशी, अपरिवर्तनीय और पूर्ण है। उसीमें अपनेको स्थित करो। फिर चाहे संसारमें, शरीरमें, नाममें, शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाले प्राणी-पदार्थ तथा परिस्थितिमें कुछ भी परिवर्तन हो जाय, तुम सदा आत्मानन्द या भगवदानन्दमें ही स्थित रहोगे। तुमपर किसीका कोई भी असर नहीं होगा।

याद रखो—यहाँ न कुछ भी तुम्हारा है, न पराया है। अपना-पराया मानकर ही तुम राग-द्वेषके वश हो जाते हो। जबतक प्रारब्धवश

शरीर है, तबतक व्यवहारके लिये सब चीजें तुम्हें यथायोग्य प्राप्त हैं। ये केवल व्यवहारके लिये ही हैं। तुम्हारे स्वरूपसे इनका कुछ भी, कहीं भी यथार्थमें कोई सम्बन्ध नहीं है। इन्हें व्यवहारोपयोगी मानकर ही यथायोग्य व्यवहार करो। जिसका त्याग उचित है, उसका त्याग करो एवं जिसका ग्रहण उचित है, उसका ग्रहण करो। परंतु द्वेष या राग किसीमें मत करो या यों समझो कि यह सब लीलामय भगवान्‌की नित्यलीला है। लीलामें परिवर्तनका और विभिन्न रसोंका, रंगोंका होना आवश्यक है। अतएव यहाँ जो कुछ भी हो रहा है, सभी भगवान्‌की लीलाका ही दृश्य सामने आ रहा है। उनकी लीला-भंगिमाको, नाट्य-निपुणताको देख-देखकर सदा उल्लसित होते रहो। नित्य नवीन नाट्य, नित्य नवीन अभिनय! कभी-कभी काली घटा, प्रखर प्रकाश; कभी मृत्यु, कभी जन्म; कभी हानि, कभी लाभ; कभी अयश-अकीर्ति, कभी यश-कीर्ति; कभी अपमान, कभी सम्मान; कभी अप्रिय प्रसंग, कभी प्रिय प्रसंग—ये सभी लीलाके ही विविध अंग हैं। वस्तुतः एक लीलामय भगवान्‌के अतिरिक्त और कुछ भी है ही नहीं।

याद रखो—जो मनुष्य प्रत्येक परिस्थितिमें लीलामय भगवान्‌को, भगवान्‌की लीलाको अथवा नित्य एकरस सच्चिदानन्दघन परमात्माको ही देखता है, वही यथार्थ देखता है। सर्वत्र समभावसे व्याप्त भगवान् या आत्माको देखनेवाले उस पुरुषकी स्थिति नित्य चिदानन्दमय-स्वरूप ही रहती है। वह जन्म-मरणके चक्रसे मुक्त हो जाता है। यही मानव-जीवनका परम ध्येय है।

याद रखो—इस परम ध्येयकी प्राप्तिके लिये ही तुम मनुष्य बनकर संसारमें आये हो। अतः संसारमें यथायोग्य व्यवहार करते हुए सदा सावधानीके साथ इस ध्येयकी प्राप्तिके प्रयत्नमें लगे रहना ही तुम्हारा परम कर्तव्य है। इससे कभी किसी अवस्थामें भी विचलित न होओ। अपने ध्येयको निश्चितरूपसे प्राप्त कर लो।

भगवत्प्रेममें महान् शक्ति

याद रखो—विशुद्ध भगवत्प्रेमके साधनमें एक महान् शक्ति है जो स्वार्थ, घृणा, भय, काम, क्रोध, लोभ, अभिमान, द्वेष और वैर आदि दुर्भावोंपर विजय प्राप्त कराकर मनुष्यके जीवनको सेवापरायण, सौहार्दमय, निर्भय, काम-क्रोध-लोभसे रहित, विनम्र, द्वेष तथा वैरभावसे शून्य एवं विभिन्न प्रकारसे प्राणी-मात्रकी सेवाके द्वारा सर्वथा भगवत्सेवामें ही नियुक्त कर देती है। फिर इन दुर्भावोंके लिये जीवनमें कोई स्थान ही नहीं रह जाता।

याद रखो—तुम कभी-कभी इन दुर्भावरूपी शत्रुओंसे अत्यन्त उत्पीड़ित होकर इनसे छुटकारा पाना तो चाहते हो, परंतु भगवान्में अविश्वासजनित मानसिक दुर्बलताके कारण, जो भोग-सुखमें विश्वास उत्पन्न करा देती है, उन शत्रुओंमेंसे ही किसीका आश्रय लेकर उसीके साथी दूसरे शत्रुओंको मारना चाहते हो। यह भूल जाते हो कि ये सभी परस्पर एक-दूसरेके सहायक, पोषक और संवर्धक हैं।

याद रखो—जैसे अन्धकारसे अन्धकारका नाश नहीं किया जा सकता और शत्रुओंसे शत्रुओंका नाश नहीं किया जा सकता, वैसे ही पापसे पापका नाश सम्भव नहीं है। इन दुर्भावोंके सेवनसे इनका परिवार और बल बढ़ता ही जायगा और परिणामस्वरूप तुम्हारा जीवन पाप-दोषमय बन जायगा।

याद रखो—इसका प्रधान कारण है—विषयानुराग—इन्द्रियभोगोंमें आसक्ति या प्रीति। इसीलिये तुम्हें जब भ्रमसे ऐसा दीखता है कि उपर्युक्त दोषोंका आश्रय छोड़ देनेसे अमुक भोग नहीं रहेगा या नहीं मिलेगा, तब तुम उन दोषोंको अपना सहायक, सुहृद् मानकर उन्हें अपनाये रखते हो तथा उन्हें छोड़नेमें विपत्ति या हानिकी सम्भावना देखते हो। यहीं तुम्हारा भ्रम और भी बढ़ जाता है।

याद रखो—भगवत्प्रेमके पथिकोंको जिस दुर्लभ परमानन्दकी

प्राप्ति पथमें ही होने लगती है, उसका भोगराज्यमें कहीं अस्तित्व ही नहीं है। तथापि दूरसे देखनेवालोंको यह भ्रम हो जाता है कि इन भगवत्प्रेमके पथिक कहे जानेवाले लोगोंके सांसारिक सुखोंका नाश हो रहा है और वे भीषण दुःखसमुद्रमें डूब रहे हैं। प्रकारान्तरसे बात भी सत्य है; जैसे सूर्यके प्रकाशमें दीपकका कोई महत्त्व या प्रयोजन नहीं रहता, अन्धकार तो मर ही जाता है, वैसी ही स्थिति यहाँ भोग-सुखोंकी होती है। इसीसे भोगपरायण लोग 'प्रेम' के नामसे ही डर जाते हैं; क्योंकि प्रेमकी भित्ति ही भोग और भोगासक्तिका सर्वथा त्याग है, उनसे एकदम रहित हो जाना है।

याद रखो—फिर यदि भोगपरायणोंकी दृष्टिमें प्रेमियोंमें कोई भोग रहते दीखते हैं तो वे वस्तुतः भोग नहीं होते। प्रेमास्पद भगवान्के इच्छानुसार रहे हुए सेवाके साधन होते हैं। वे पूजाके उपकरण होते हैं—इन्द्रियके चरितार्थ करनेवाले विषय नहीं!

याद रखो—यह तो प्रेमराज्यमें प्रविष्ट पथिकोंकी बात है। जो वस्तुतः भगवत्प्रेमको प्राप्त कर चुके हैं, उनका जीवन तो इतना पवित्रतम उच्चातिउच्च स्तरपर पहुँचा हुआ होता है कि स्वयं पूर्णकाम आप्तकाम भगवान् उनसे मिलनेके लिये लालायित रहते हैं। सच तो यह है कि भगवान् उनसे सदा मिले ही रहते हैं। भगवान् उनके दिव्य दानके गृहीता बनते हैं और वे सहज दाता।

याद रखो—उनमें दातापनका अभिमान तो होता ही नहीं, उनके पास अपना कुछ है या वे कुछ दे सकते हैं—ऐसी कल्पना भी उनके जीवनमें कहीं नहीं रह जाती, परंतु स्वयं भगवान् ही उन परम अकिंचनोंमें इतनी दुर्लभ वस्तु देखते हैं कि वे निरन्तर उनको बिना किसी व्यवधानके अपने साथ रखनेमें अथवा उनके साथ रहनेमें—सर्वथा घुल-मिलकर रहनेमें आनन्दलाभ करते हैं। यही प्रेमका महान् चमत्कार है।

अनन्त और अपार भगवत्कृपा

याद रखो—भगवत्कृपा अनन्त और अपार है। वह सभी प्राणियोंपर, सभी परिस्थितियोंमें, सभी समय बरसती रहती है। जो उसपर विश्वास करता है, वह उस सर्वथा समभावसे सबको प्राप्त होनेवाली कृपाका अनुभव कर सकता है। जिसका मन अविश्वासके तथा संदेहके अन्धकारसे ढका है, उसे उस परम रहस्यमयी अहैतुकी कृपाके दर्शन नहीं होते।

याद रखो—उस कृपाके असंख्य रूप हैं और वह आवश्यकतानुसार विभिन्न रूपोंमें प्रकट होती रहती है। भगवान्‌के अनुग्रहपूर्ण मंगलमय विधानमें मनुष्य जब संदेह करता है, उसके विरुद्ध निश्चय तथा आचरण करता है, तब भगवत्कृपा भयानकरूपमें प्रकट होकर विपत्ति और वेदनाके द्वारा उसके हृदयकी विशुद्धि करती है और जब मनुष्य विश्वासपूर्ण हृदयसे प्रत्येक परिस्थितिमें उसके अनुकूल आचरण करता है, तब वह कृपा बड़े सौम्यरूपमें आत्मप्रकाश करती है।

याद रखो—भगवत्कृपा किसी भी रूपमें प्रकट हो, वह सदा मंगलमयी है और मंगल ही करती है। दवा मीठी भी दी जाती है, कड़वी भी; कहीं-कहीं अंग काटकर भी चिकित्सक अंदरके मवादको निकालता है। पर इन सबमें उद्‌देश्य एक ही होता है—रोगनाश। रोगके अनुसार ही दवाका प्रयोग या ऑपरेशनकी क्रिया की जाती है; इसी प्रकार भगवत्कृपाके भी विविध रूप होते हैं—हमारे परम मंगलके लिये ही।

याद रखो—बाहरी वस्तुओं तथा परिस्थितियोंसे कृपाका पता नहीं लगता। अनुकूल वस्तु या परिस्थितिमें कृपा समझना और प्रतिकूलमें कृपाका अभाव मानना सर्वथा भ्रम है। कृपामय भगवान्‌का प्रत्येक विधान कल्याणमय है, वे जो कुछ भी करते हैं, सर्वथा निर्भ्रान्तरूपसे हमारे परम कल्याणके लिये ही करते हैं। जैसे सुख-सौभाग्यमें अत्यन्त अनुकूल दिखायी देनेवाले पदार्थ और परिस्थितिकी प्राप्तिमें उनकी

कृपा रहती है, ठीक वैसी ही दुःख, दुर्भाग्य, अत्यन्त प्रतिकूल दीखनेवाले पदार्थ और परिस्थितिकी प्राप्तिमें रहती है।

याद रखो—जब तुम विश्वासकी दृष्टि प्राप्त कर लोगे, तब तुम्हें यह प्रत्यक्ष दिखलायी देगा कि तुम्हें प्राप्त होनेवाले प्रत्येक पदार्थ और परिस्थितिमें भगवत्कृपाका मंगलमय कार्य हो रहा है। फिर तुम्हें चोटका दुःख जरा भी न होगा; वरन् चोट करनेवाले परम प्रेमास्पद परम कल्याणमय नित्य सहज सुहृद् प्रभुके मंगलमय कोमल आनन्दमय करस्पर्शका आनन्द प्राप्त होगा।

याद रखो—भगवान् सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, सर्वथा निर्भ्रान्त, सर्वलोकमहेश्वर हैं; वे सब कुछ जानते, सब कुछ कर सकते हैं एवं सबके स्वामी हैं। उनसे कभी भूल नहीं होती। ऐसे भगवान् सतत सावधानीके साथ सहजरूपमें तुमपर कृपा-वर्षा करते रहते हैं। तुम विश्वास करो, अपनेको उनके चरणोंपर बिना किसी शर्तके डाल दो, उनके प्रत्येक विधानकी मंगलमयतामें विश्वास करके उसका हृदयसे स्वागत करो; अपनेको सम्पूर्ण समर्पण कर दो। उनके कृपामय विधानको बदलाना मत चाहो। फिर देखोगे—उनकी कृपा सीधी तुम्हारे जीवनपर बरसेगी तथा तुम्हारे वर्तमान और भविष्यको परम उज्ज्वल तथा परम आनन्दमय बना देगी।

याद रखो—तुम जो कुछ प्राप्त करना चाहते हो, जब वह नहीं होता और जब उसमें अचानक ऐसी बाधा आ जाती है जो तुम्हारे मनोरथको नष्ट कर देती है, तब वहाँ तुम भगवान्की कृपाके दर्शन करो। भगवत्कृपा ही बाधा बनकर आयी है और तुम्हें भारी दुःखसे बचानेके लिये, जिसकी तुम्हें कल्पना नहीं है और वह भलीभाँति जानती है; तुम्हारे इस कार्यको असफल कर देती है।

याद रखो—तुम भगवत्कृपासे अपने मनका काम करवाना चाहते हो, यही तुम्हारी बड़ी भूल है। यही तुम सीधी तुमपर उतरनेवाली कृपाकी धारामें बाधा देते हो। भगवत्कृपासे कह दो—मुक्तकण्ठसे

विश्वासकी मौन वाणीमें स्पष्ट कह दो कि 'तुम जो ठीक समझो, जब ठीक समझो, जैसे ठीक समझो वही, उस समय, वैसे ही करो।' अपनेको बिना किसी शर्तके, बिना कुछ बचाये—भगवत्कृपाके समर्पण कर दो। फिर भगवत्कृपा निर्बाधरूपसे अपना मंगलमय दर्शन देकर तुम्हें कृतार्थ कर देगी।

भगवान् सर्वत्र, सदा और सबके

याद रखो—ऐसा कोई स्थान नहीं है और ऐसा कोई समय नहीं है, जिसमें भगवान् न हों एवं ऐसा कोई प्राणी नहीं है, जिसपर भगवान्‌की कृपा न हो, जिसको भगवान् अपनानेसे कभी इनकार करते हों।

याद रखो—भगवान् स्वभावसे ही सुहृद् हैं, वे कृपाके ही मूर्तिमान् स्वरूप हैं। उनमें किसी भी पापीके प्रति कभी घृणा नहीं होती। किसने पहले क्या किया है, कौन कैसा रहा है, किस देश-वेषका है, किस जाति-कुलका है, किस धर्म-सम्प्रदायका है—यह कुछ भी वे नहीं देखते। वे देखते हैं—केवल उसके वर्तमान मनको, उसके मनकी वर्तमान परिस्थितिको, उसकी सच्ची चाहको। कोई भी, कहीं भी, किसी भी समय अनन्य मनसे उनकी चाह करता है; उनकी कृपा, प्रीति या दर्शन पानेके लिये एकान्त लालायित हो जाता है, भगवान् उसके इच्छानुसार उसपर कृपा करते, उसे प्रीतिदान करते या दर्शन देकर कृतार्थ कर देते हैं।

याद रखो—संसारके भोग पहले तो इच्छानुसार प्राप्त नहीं होते, प्राप्त भी अधूरे ही होते हैं और प्राप्त होकर निश्चय ही नष्ट हो जाते हैं; परंतु अनन्य इच्छा करनेपर भगवान् निश्चय ही प्राप्त होते हैं, इच्छानुसार कृपा, प्रेम या दर्शन देकर कृतार्थ करते हैं। वे सर्वत्र सदा पूर्णतासे परिपूर्ण हैं तथा प्राप्त होकर कभी बिछुड़ना उनके स्वभावसे विरुद्ध है।

याद रखो—मानव-शरीर भोगोंके लिये नहीं मिला है। भोगोंके लिये तो अन्यान्य समस्त योनियाँ हैं ही। यह तो मिला है केवल परमशान्तिमय परमानन्दमय नित्य शाश्वत अखण्ड चिदानन्दमय भागवत-जीवनकी प्राप्तिके लिये। यह जीवन ही दिव्य जीवन है—भगवत्प्राप्ति है। इसीको जीवनका परम लक्ष्य—एकमात्र लक्ष्य बनाकर इसीकी

प्राप्तिके प्रयासमें सदा संलग्न रहना मानव-जीवनका परम कर्तव्य है। इस कर्तव्यसे विमुख मनुष्यका भविष्य निश्चय ही अत्यन्त अन्धकारमय है, भले ही वह (तथा जिस समाजमें वह रहता है—वह समाज भी) अपनेको समुन्नत, सुखी तथा ज्ञानोज्ज्वल स्थितिको प्राप्त समझे। पर उसकी यह समझ सर्वथा भ्रान्त है। उसकी बुद्धि उसे धोखा दे रही है।

याद रखो—जब तुम्हारे जीवनका लक्ष्य भोग होगा भगवान् नहीं; विषय-सुख होगा भागवत-सुख नहीं; लौकिक विषयोंकी प्राप्ति होगी भगवान्‌की प्राप्ति नहीं—तब सहज ही भोगासक्ति, भोग-कामना, कामना-सिद्धिजनित लोभ, कामना-असिद्धिजनित क्रोध, ममता, अभिमान आदि दोष उत्पन्न होकर तुम्हारे सारे जीवनको भ्रान्त और अशान्त कर देंगे। तुम्हारी बुद्धि विपरीत निर्णय करनेवाली बन जायगी और भोगपरायण मन-इन्द्रियके इच्छानुसार विषयोंकी ओर तुम्हें प्रेरित करने लगेगा। उस समय तुम अधर्मको धर्म, अकर्तव्यको कर्तव्य, बुरेको भला, विपत्तिको सम्पत्ति और अन्धकारको प्रकाश मानने लगोगे और इसके परिणामस्वरूप तुम्हारा जीवन तपोमय, अशान्तिमय, दुःखमय, चिन्तामय, ज्वालामय बन जायगा। परलोक भी बिगड़ जायगा, भगवान्‌की प्राप्ति तो होगी ही नहीं। तुम अशान्तिमय जीवन बिताते हुए अशान्तिमें ही मरोगे और आगे भी दुःखमय स्थितिको ही प्राप्त होते रहोगे।

याद रखो—मानव-जीवनके असली लक्ष्यका परित्याग करनेपर तुम्हारी यही दुर्दशा होगी। अतएव तुम तुरंत अपने जीवनका लक्ष्य स्थिर कर लो। वह परम और चरम लक्ष्य भगवान् हैं और बड़ी सावधानीके साथ अपनी विचारधाराको, अपनी प्रत्येक चेष्टा और क्रियाको उसीकी सिद्धिके लिये जोड़ दो। तुम्हारा मानव-जीवन निश्चय ही सफल हो जायगा। जबतक जीओगे, बाहरी परिस्थिति कैसी भी हो, तुम सदा शान्तिसुखका अनुभव करते रहोगे, सुखसे मरोगे और भगवान्‌को प्राप्त करके कृतार्थ हो जाओगे।

साधनमें शीघ्रताकी आवश्यकता

याद रखो—जिसको जल्दी यात्रा पूरी करके अपने घर पहुँचना है, जिसको पल-पलमें घरकी याद आती है और घरके लिये जिसकी व्याकुलता बढ़ रही है, वह रास्तेके विलम्बको कैसे सहन करेगा? वह न तो रास्तेमें किसीमें ममता करके किसीके मोहमें फँसेगा, न किसीसे जरा भी लड़-झगड़कर अपने समयको खोयेगा तथा अपने मार्गमें रुकावट पैदा करेगा और न कहीं इधर-उधर भटकेगा और अटकेगा ही। वह सबसे मेल रखता हुआ अपने लक्ष्यपर ध्यान रखते हुए सीधा अपनी राहपर चलता रहेगा। इसी प्रकार यदि तुम्हें जीवनके चरम तथा परमलक्ष्य श्रीभगवान्‌के धाम पहुँचना है, भगवान्‌को प्राप्त करना है तो इस बातको कभी न भूलकर सावधानी तथा शीघ्रताके साथ आगे बढ़ते चले जाओ।

याद रखो—तुम यहाँ जिस घरको अपना घर कहते हो, वह तुम्हारा घर नहीं है, रेलके डिब्बेके समान यात्रामें बैठनेका स्थान है या किसी समय रास्तेमें विश्रामके लिये किसी धर्मशाला या वेटिंग रूममें ठहरते हो, वैसे ही कुछ समयके लिये ठहरनेका स्थान है। तुम्हारा यह शरीर यात्रा-शरीर है और तुम्हारा जीवन-यापन तथा तुम्हारी सारी क्रियाएँ चलना है। यदि तुम अपने लक्ष्यको—भगवान्‌को कभी न भूलते हुए सदा निर्लेप तथा सावधान रहकर भगवान्‌की ओर चलते रहोगे तो यह मानव-शरीर तुम्हें निश्चय ही वहाँ पहुँचानेमें समर्थ होगा; पर यदि तुमने यात्राको स्थायी निवास मान लिया, रास्तेमें बैठने या ठहरनेके स्थानरूप इस घरको अपना घर मान लिया, किसीमें ममता जोड़ ली और किसीसे द्वेष कर लिया और यदि इन्द्रियोंके भोगोंमें अटककर इधर-उधर भटक गये तो तुम्हारी यह यात्रा सफल तो होगी ही नहीं, तुम्हारे मानव-जीवनका उद्देश्य तो पूरा होगा ही नहीं, बल्कि उलटे मार्गपर चलकर तुम भगवान्‌से और भी दूर पहुँच जाओगे।

याद रखो—यदि ममतावश तुम कहीं किसी प्राणी-पदार्थमें

मोहित हो गये, भोगोंमें आसक्त हो गये तो बुरी तरह फँस जाओगे, फिर निकलना अत्यन्त कठिन हो जायगा और यदि कहीं द्वेष करके लड़-झगड़ बैठे तो वैसे ही नयी विपत्तिसे घिर जाओगे, जैसे रेलके डिब्बेमें या राहमें कहीं किसीसे लड़ाई-झगड़ा हो जानेपर फौजदारीमें मुकदमा चल जाता है, रुपये खर्च होते हैं और जेलकी सजा भुगतनी पड़ती है। यात्रा ही नहीं रुकती, उलटी विपत्तियाँ झेलनी पड़ती हैं, वैसा ही मानव-जीवनकी इस यात्रामें भी हो सकता है। अतएव न कहीं ममतामें बँधकर राग करो, न द्वेष करो, न किसीमें मोह करो, न किसीसे लड़ो-झगड़ो। जैसे बुद्धिमान् यात्री रास्तेमें सबसे प्रेमका सम्बन्ध रखता हुआ अपनी यात्रा सुखपूर्वक पूरी करता है, इसी प्रकार तुम भी अपनी इस महायात्राको सावधानीके साथ पूर्ण करो।

याद रखो—मानव-शरीर जहाँ प्रयत्न करनेपर भगवत्प्राप्तिका, मोक्षका परम साधन है, वहाँ वही कर्म-शरीर होनेके कारण विपरीत कर्म करनेपर बड़े भारी बन्धनका और नरकयन्त्रणाका कारण बन सकता है। दूसरे शरीरोंमें यह बात नहीं है; पर यहाँ तो यदि सफलताकी ओर नहीं अग्रसर हुए तो घोर विफलता प्राप्त होगी और अनेकों जन्म-मरणके नये चक्रमें फँस जाना पड़ेगा।

याद रखो—तुम संसारमें मानव-जीवनमें आये ही हो—भगवत्प्राप्तिके लिये, भोगके लिये नहीं। भोग तो अनेक योनियोंमें प्राप्त होते रहते हैं। पशु-पक्षियोंकी योनिमें और देव-राक्षसादिकी योनिमें बहुत अधिक प्राप्त होते हैं। भगवत्प्राप्तिका साधन तो इसी एक मानव-शरीरमें ही सुलभ है। अतएव यदि तुम इस परम उद्देश्यकी सिद्धिके लिये अपने जीवनको इस कल्याणमय साधनमें न लगा देते हो तो तुम्हारी मूर्खताकी सीमा नहीं है। तुम जान-बूझकर हाथमें आये हुए स्वर्ण-अवसरको ही नहीं खो देते हो—वरन् महान् हानिके पात्र बनते हो। अतएव सावधानीसे बिना अटके-भटके भगवान्‌की ओर बढ़ते रहो।

प्रभुके साथ नित्य सम्बन्ध

याद रखो—सांसारिक प्राणी-पदार्थोंसे सम्बन्ध जोड़नेमें प्रयास और समय आवश्यक है। इतनेपर भी इच्छानुसार सम्बन्ध जुड़ना निश्चित नहीं है; परंतु प्रभुके साथ सम्पर्क स्थापित करनेमें न प्रयासकी आवश्यकता है, न समयकी। तुम्हारी इच्छा होनी चाहिये। इसका कारण यही है कि प्रभुके साथ तुम्हारा नित्य सम्बन्ध है और वे सदा ही तुम्हारे साथ रहते हैं।

याद रखो—तुम्हारे अन्दर जो सत्ता, स्फूर्ति, शक्ति, चेतना है, वह सब प्रभुसे ही मिली है। प्रभु ही तुम्हारे जीवनमें पुष्टि-तुष्टि, शान्ति-कान्ति, क्षेम-प्रेम, ज्ञान-विज्ञानके रूप अभिव्यक्त हैं। तुम ऊपरकी चीजोंको देखते हो, इसीलिये सबके मूल, सबके सत्तारूप प्रभुको देख नहीं पा रहे हो। उधर तुम्हारी दृष्टि ही नहीं है, इसीसे तुम्हारे सामने सत्य छिपा है। तुम किसी भी क्षण दृष्टिको भीतर ले जाकर, अपने विचारोंके प्रवाहको प्रभुकी ओर मोड़कर उन्हें जान सकते हो।

याद रखो—प्रभुको जाननेकी तुम्हारी तीव्र इच्छा होनी चाहिये। इसके लिये तुम्हारे अंदर तड़प होनी चाहिये। फिर तुम केवल उन्हें जान ही नहीं लोगे, उन्हें देख भी लोगे और उनके साथ घुल-मिल भी जाओगे। उनके दिव्य लीलाक्षेत्रमें तुम्हारा सहज प्रवेश हो जायगा।

याद रखो—वे प्रभु सदा ही तुम्हारे हैं और तुम सदा ही उनके हो। तुम्हारा यह सम्बन्ध नित्य है, अच्छेद्य है; परंतु तुम इसे भूल रहे हो। इसीसे किसी छोटे-से क्षेत्रमें और छोटी-सी नाम-रूपकी सीमामें अपनेको बाँधकर उसी क्षेत्र तथा नाम-रूपके झगड़ेमें उलझे हो और उसीके कल्पित विकास-विनाश, लाभ-हानि, सुख-दुःख और अनुकूलता-प्रतिकूलताकी प्राप्तिमें दिन-रात विकारग्रस्त हुए छटपटा रहे हो। तुम्हारी मूर्खता ही इसमें हेतु है।

याद रखो—तुम चाहते हो—शाश्वत सुख-शान्ति। उस शाश्वत

सुख-शान्तिका जो नित्य आधार है, जो अक्षय अनन्त भण्डार है, वह सदा तुम्हारे पास है, परंतु तुम उसे भुलाकर उससे दूर, बहुत दूर जाकर सुख-शान्तिका अनुसंधान कर रहे हो; तुम्हारा यह प्रयास वैसे ही सर्वथा मिथ्या और निश्चित असफल है, जैसे संतप्त बालूमेंसे तेल निकालना। तथापि तुम इतने मोहग्रस्त हो रहे हो कि दिन-रात बालूके पेरनेमें ही लगे अपने जीवनको दुःखमय बनाते हुए बरबाद कर रहे हो। स्नेह-सुधासागर तुम्हारे अंदर ही लहरा रहा है, पर तुम्हारी मूर्खतासे वहाँ तुम्हें सूखा प्रतीत हो रहा है और तुम भटकते भीषण विषय-विष-ज्वालासे दग्ध हुए जा रहे हो।

याद रखो—तुम तनिक गहराईमें जाकर प्रभुकी ओर देखो, अपनेको उनकी ओर मोड़नेकी इच्छा करो। फिर तो उनकी सहज कृपा तुमपर बरस पड़ेगी, तुम सहज ही शीतल, शान्त, स्वच्छ, निर्मल, शाश्वत, शक्तिसमन्वित, परम मधुर और सुन्दर जीवनसे सम्पन्न हो जाओगे। तुम्हारे सभी संताप सदाके लिये नष्ट हो जायँगे; परंतु जबतक तुम उनकी ओरसे मुख मोड़े रहोगे, तबतक जलते ही रहोगे। न कोई प्राणी तुम्हें शान्ति दे सकेगा, न कोई पदार्थ या परिस्थिति ही।

याद रखो—ज्यों-ज्यों तुम संसारके इन अनुकूल प्रभु-विमुख प्राणी-पदार्थ-परिस्थितियोंकी खोजमें आगे बढ़ोगे और ज्यों-ज्यों तुम्हें इनकी प्राप्ति होगी, त्यों-ही-त्यों तुम्हारी अशान्ति, तुम्हारी जलन, तुम्हारा संताप बढ़ता ही चला जायगा। यों ही न मिलनेकी हालतमें भी तुम अशान्ति, जलन और संतापसे ही पीड़ित रहोगे। इन प्राणी-पदार्थ-परिस्थितियोंकी आस्था, आशा, आकांक्षा छोड़कर प्रभुकी ओर देखो। फिर सारी प्रभु-इच्छित अनुकूलता अपने-आप ही आकर तुम्हारे चरण चूमेगी और तुम्हारे संतापका और उसके कारणोंका सदाके लिये सर्वनाश हो जायगा।

भोगपदार्थोंकी स्थिति

याद रखो—संसारके भोगपदार्थोंकी वैसी ही स्थिति है, जैसी बच्चोंके खिलौनोंकी; जैसे बच्चे काँचकी रंग-बिरंगी गोलियोंसे, मिट्टी-पत्थर-धातुके खिलौनोंसे खेलते हैं, उनमें आसक्ति-ममता करते हैं, उनके छीने जाने या नष्ट हो जानेपर दु:खी होते तथा रोते हैं, छीन लेने या तोड़ देनेवालोंपर क्रुद्ध होते हैं, उनसे लड़ते-झगड़ते हैं, अपमानको सहन न करके उसका बदला लेना चाहते हैं, ठीक वैसे ही बड़ी उम्रके तुमलोग मकान, जमीन, भोगपदार्थ, मान-सम्मान, नाम-इज्जत आदिके लिये व्यवहार-बर्ताव तथा अनुभव करते हो। बच्चोंका अज्ञान अविकसित है, इससे उनको दीर्घकालतक स्मृति नहीं रहती। वे लड़-झगड़कर जल्दी प्रसन्न हो जाते हैं, अपमानको भी जल्दी भूल जाते हैं। बड़ी उम्रके तुमलोगोंका अज्ञान विकासको प्राप्त रहता है, इसलिये तुम जीवनभर स्मरण रखते हो और इसलिये जन्मान्तरमें भी उसके संस्कारोंको साथ लिये जाते हो।

याद रखो—यहाँका जीवन तुम्हारी लम्बी यात्राका एक मार्ग है, घर-द्वार आदि सब रेलके डिब्बे या रास्तेकी सरायके समान हैं। यहाँकी चीजें मार्गके निर्वाहके लिये हैं और यहाँके सम्बन्ध यात्रियोंके यात्राकालके परस्पर कल्पित सम्बन्धके अनुसार हैं। न यहाँके काम तुम्हारे काम हैं, न यहाँका घर तुम्हारा स्थायी घर है, न यहाँकी वस्तुएँ तुम्हारी अपनी हैं और न यहाँके सम्बन्ध ही तुम्हारे स्थायी सम्बन्ध हैं। ये सब कामचलाऊ हैं, अनित्य हैं और कल्पनामात्र हैं। इनके साथ वास्तविक सम्बन्ध जोड़कर इनमें ममता-आसक्ति कर लेनेसे ही सारी फँसावट होती है, एक दु:खके बाद दूसरे नये दु:खकी परिस्थिति आती रहती है तथा एकके बाद दूसरा नया बन्धन उत्पन्न होता रहता है। रास्तेमें मुसाफिर एक-दूसरेसे लड़ बैठें, द्वेष-वैर करने लगें तो क्लेश-कलह-दु:ख तथा कहीं-कहीं मुकद्दमा चल जानेपर नया दु:ख—बन्धन

हो जाता है, यात्रामें रुकावट आ जाती है; वैसे ही ममता-आसक्ति करनेपर भी राहमें रुकावट तथा बन्धन होता है। अतएव इस जीवनको मुसाफिरका जीवन समझकर अपने एकमात्र लक्ष्य परमानन्दरूप भगवान्की प्राप्तिको सामने रखते हुए सावधानीके साथ अपने मार्गपर चलते रहो। न किसी प्राणी-पदार्थ-परिस्थितिके साथ राग या ममत्व करो तथा न किसीके साथ द्वेष या परत्व करो। सेवा करो, प्रेम करो, सुख दो—सेवा चाहो मत, दूसरेको प्रीति करनेके लिये बाध्य न करो—सुखकी किसीसे आशा न रखो और यहाँके तमाम भोग-पदार्थोंको क्षणभंगुर, अनित्य, केवल देखनेमें सुन्दर—फलमें असुन्दर समझकर उनका यथायोग्य उपयोग करो; पर करो इन्हें खिलौने समझकर, न कि अपनी वस्तु समझकर।

याद रखो—यहाँ जो वस्तु, प्राणी, परिस्थिति प्राप्त नहीं हैं, उनके लिये दुःख न करो और न उनके लिये लुभाओ, ललचाओ। जो प्राप्त हैं, उनका निरन्तर भगवत्सेवामें प्रयोग करो। प्रत्येक परिस्थितिसे लाभ उठाओ और लाभ उठानेका यही अर्थ है कि उन प्राणी-पदार्थ-परिस्थितिको भगवत्सेवाके उपयोगी बनाकर सदा-सर्वदा अपनेको सेवामय बनाये रखो। तुम्हारे जीवनका प्रत्येक श्वास, प्रत्येक विचार, प्रत्येक क्रिया तथा प्रत्येक पदार्थ भगवान्की सेवामें ही लगना चाहिये, तभी उनकी सार्थकता है। नहीं तो 'व्यर्थ' ही नहीं, वे 'अनर्थ'-रूप हैं।

याद रखो—जीवनका जो क्षण, जो विचार, जो कार्य भगवान्की सेवामें लगता है, वह वास्तविक 'अर्थ' है—यह अर्थ ही परमार्थ है। जो निर्दोष भोगकी प्राप्ति तथा संयोगमें लगता है, वह 'व्यर्थ' है और जो दोषयुक्त अवैध भोगोंके भोग तथा प्राप्तिके साधनमें लगता है, वह सर्वथा 'अनर्थ' है। 'अनर्थ' का सर्वथा परित्याग करो, उसे बिलकुल छोड़ दो। 'व्यर्थ' का भी त्याग करो; क्योंकि जीवन बरबाद होता है और केवल 'अर्थ' का सेवन करो, जीवनको सर्वतोभावेन 'परमार्थ' में लगाओ।

याद रखो—इसीसे भगवान्‌के द्वारा गीतामें प्रयुक्त चतुर्विध आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी भक्तोंकी एक महात्माने ठीक क्रमसे यह व्याख्या की है कि जो परमार्थरूप भगवान्‌की प्राप्तिके लिये अत्यन्त आतुर है, परम दुःखी है—बिलकुल आर्त होकर रो रहा है, वह 'आर्त' भक्त है। जो प्रत्येक प्राप्त साधन-सामग्रीसे तथा बुद्धि-विद्या-संत आदिसे केवल भगवान्‌का ही संधान पूछता है, वह 'जिज्ञासु' है। जो केवल भगवान्‌रूप 'अर्थ' के लिये ही अनन्यरूपसे तीव्रतम कामना करता है, वह 'अर्थार्थी' है और जो भगवान्‌का यथार्थ संधान प्राप्त कर चुका है, वह 'ज्ञानी' है। इसलिये तुम सदा सच्चे अर्थमें 'सच्चे अर्थ' के लिये 'अर्थार्थी' बनो। भगवान् ही वह सच्चा अर्थ हैं।

मनुष्य-शरीरकी महत्ता

याद रखो—महान् पुण्यके फलस्वरूप तथा महती भगवत्कृपासे तुम्हें यह मनुष्य-शरीर प्राप्त हुआ है। यह मानव-शरीर संसाररूपी दुःखसमुद्रको पार करनेके लिये सुन्दर सुखमय नौकाके समान है। अतएव जबतक यह किसी चट्टान आदिसे टकराकर टूट नहीं जाती, अर्थात् जबतक यह शरीर बना हुआ है, मृत्यु नहीं हो जाती तभीतक इसके द्वारा संसार-सागरको पार कर लेना चाहिये।

याद रखो—जन्म-मरणरूपी यह संसार सर्वथा अनित्य, अपूर्ण अतएव दुःखका समुद्र है। जिस प्रकार सागरमें ऊँची-नीची तरंगें उठा-मिटा करती हैं, उसी प्रकार संसारमें ऊँचे-नीचे शरीरोंकी उत्पत्ति तथा नाश हुआ करता है। इन सारे शरीरोंमें एक मनुष्य-शरीर ही ऐसा है, जिसमें साधनके द्वारा जीव इस जन्म-मरणरूप घोर दुःख-सागरसे पार जा सकता है; परंतु यह शरीर है अत्यन्त क्षणभंगुर। कमलके पत्रपर पड़ी हुई जलकी बूँद जैसे जरा-सा हवाका झोंका लगते ही गिर पड़ती है, वैसे ही इस शरीरका अन्त भी क्षणमात्रमें हो जाता है। अतएव इसके नाशसे पूर्व ही साधनमें सफलता प्राप्त कर लेनी चाहिये।

याद रखो—तुम शरीर नहीं, आत्मा हो। आत्मा जन्म-मरणसे रहित नित्य सत्य है। इसमें न उत्पत्ति है न विनाश, न सुख है न दुःख। प्रकृतिके साथ तादात्म्य हो जानेसे यानी कारण, सूक्ष्म तथा स्थूल शरीरसे आबद्ध हो जानेसे उसमें जन्म-मरणका—सुख-दुःखका आरोप हो गया है।

याद रखो—स्थूल शरीर पंचभूतोंका कार्य होनेसे जड़ है। इसमें चेतनता दीखनेका कारण है इसके भीतर रहनेवाला सूक्ष्म शरीर, जो इसे चेतना देता है। वस्तुतः वह सूक्ष्म शरीर भी सत्रह या उन्नीस (पंचप्राण, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय, मन तथा बुद्धि अथवा मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार) तत्त्वोंसे बना होनेके कारण स्वभावसे जड़ ही है, पर चेतन आत्माका प्रकाश लेकर वह स्वयं चेतन बना हुआ स्थूल शरीरमें चेतनाका उदय कराता है।

याद रखो—आत्मस्वरूपकी विस्मृति या भगवदंशस्वरूपसे च्युति ही अज्ञान है। यह अज्ञान ही 'कारण शरीर' है। नित्य सत्य आत्मामें जन्म-मरण न होनेपर भी, आत्मामें भोक्तापन न होनेपर भी अज्ञानके कारण वह अपनेको जन्म-मरणवाला तथा भोगोंका भोक्ता मानता है, यही उसका 'जीव'-स्वरूप है और जबतक वह अपनेको जीव मानता रहेगा, तबतक जन्म-मृत्युका चक्र या भव-प्रवाह चालू ही रहेगा।

याद रखो—अज्ञानवश शरीरके धर्मको अपनेमें कल्पित करके जीवभावको प्राप्त आत्मा स्थूल शरीरके जन्म-मरणको अपना जन्म-मरण, जन्मके कष्टको कष्ट, मृत्युकी यातनाको यातना, प्राणोंकी भूखको भूख, शरीरकी अपवित्रतासे अपवित्रता, शरीरकी हानिसे अपनी हानि मानता है और इनके निवारणका उपाय सोचता है। स्वयं सर्वथा संगरहित होकर भी राग-द्वेषको अपनाकर दुःखी होता है, सुखस्वरूप होकर भी शरीरके दुःखसे दुःखी होता है। यही अज्ञान है और इसी अज्ञानसे यह संसार-समुद्र बना हुआ है।

याद रखो—इस अज्ञानका नाश करना—इस संसार-समुद्रसे पार होना ही तुम्हारा काम है, इसीलिये मानव-शरीर मिला है। इसीलिये तुमको चाहिये कि तुम लोकधर्मसे—प्रापंचिक हानि-लाभसे मन हटाकर अन्तःकरणको शुद्ध कर लो, भगवान्‌के भजनके द्वारा अपने सत्य स्वरूपको समझो और अपने आत्मस्वरूपमें स्थित होकर इस असार तथापि भीषण भव-समुद्रसे पार हो जाओ। तुम संसार या शरीर नहीं हो, तुम मन, बुद्धि, इन्द्रिय नहीं हो, न ये सब तुम्हारे हैं। ये सब तुमसे भिन्न हैं; क्योंकि ये सभी दृश्य हैं। तुम तो सबके द्रष्टा हो। वास्तवमें तो एक भगवान् या आत्माके अतिरिक्त अन्य किसीकी सत्ता ही नहीं, इस सत्यको प्राप्त करके कृतकृत्य हो जाओ। निश्चय मानो, तुम जड़ अनित्य देह नहीं, सच्चिदानन्द आत्मा हो।

परमात्मा नित्य पूर्ण और एकरस है

याद रखो—परमात्मा अनादि अनन्त नित्य सत्य स्वतः प्रमाण है। परमात्माको सिद्ध करनेके लिये प्रमाता, प्रमेय और प्रमाणकी आवश्यकता नहीं है। वस्तुतः परमात्मासे ही प्रमेय-प्रमाणादि व्यवहारोंकी सिद्धि होती है। परमात्मा नित्य है, उसकी कभी कहीं उत्पत्ति हुई हो सो नहीं है, इसीसे उसका कभी कहीं अभाव या नाश नहीं है, वह शाश्वत है। अन्तःकरणकी मलिनताके कारण ही उसका अनुभव नहीं हो रहा है। अन्तःकरणके निर्मल होते ही, अविद्याका आवरण दूर होते ही अपने-आप ही उसका प्रकाश हो जाता है, वैसे ही जैसे बादलके हटते ही सूर्य प्रकाशित हो जाता है। सूर्य तो पहलेसे ही प्रकाशित है, बादलके आवरणसे दीखता नहीं है। इसी प्रकार परमात्मा पहलेसे ही होनेपर भी योगमायाके पर्देके कारण उसके दर्शन नहीं होते।

याद रखो—परमात्मा एकरस तथा पूर्ण है। उसमें कभी भी किसी परिवर्तन-परिवर्धनके लिये अवकाश नहीं है। परमात्मा अमुक स्थानमें कम है, अमुकमें अधिक है। कहीं अपूर्ण है, कहीं पूर्ण है। ऐसी कल्पना ही नहीं है। वह सर्वत्र पूर्ण है। ऐसा विलक्षण है कि उस पूर्णमेंसे पूर्ण पृथक् हो जाय तब भी पूर्ण ही शेष बच रहता है। जैसे चींटीमें आत्मा पूर्ण है, वैसे ही हाथीमें भी पूर्ण है। छोटे-बड़े शरीरोंमें आत्मा छोटा-बड़ा नहीं होता, ऐसे ही समस्त विश्वब्रह्माण्ड और उसके परे भी, सृष्टिके पूर्व, सृष्टिकाल और सृष्टिके प्रलयके पश्चात् भी परमात्मा नित्य पूर्ण ही रहता है। उसे कोई जाने या न जाने, उसकी पूर्णता सदा सर्वत्र पूर्ण ही रहती है।

याद रखो—परमात्मा किसी देश-कालसे परिच्छिन्न नहीं है; क्योंकि वह सर्वकालमें, सर्वदेशमें तथा सबके लिये स्वतःसिद्ध ही है। बल्कि समस्त काल, समस्त देश और सबकी सत्ता उसीकी सत्तापर

आधारित है। परमात्माके आधार बिना किसी भी देश-कालकी प्रतीति ही नहीं हो सकती।

याद रखो—परमात्मामें या परमात्माके ज्ञानमें ज्ञाता और ज्ञेयका कोई भेद नहीं है। भेदकी प्रतीति उपाधिके कारण होती है। ज्ञानसे पृथक् ज्ञेय पदार्थकी सिद्धि नहीं हो सकती और ज्ञेयके बिना ज्ञातृत्वका व्यवहार भी नहीं बन सकता। इस प्रकार ज्ञेय और ज्ञाताको एक-दूसरेकी अपेक्षा रहती है; परंतु परमात्मा या उसका ज्ञान स्वत:सिद्ध होनेके कारण उसकी सिद्धिके लिये किसीकी अपेक्षा नहीं है।

याद रखो—परमात्माका यथार्थ स्वरूप सर्वथा अनिर्वचनीय है। ज्ञान, ज्ञाता और ज्ञेय एक ही परमात्माके उपाधिभेद द्वारा कल्पित स्वरूप हैं। वस्तुतः परमात्मा नित्य स्वरूपमय भेदरहित है।

याद रखो—यह परमात्मा सर्वदेश, सर्वकाल तथा सबमें नित्य स्वरूपगत होनेपर भी इसकी उपलब्धि या अनुभूति इसीलिये नहीं होती कि मिथ्या होनेपर भी अविद्याका एक आवरण बीचमें आ गया है। इसीसे नित्य स्वरूपकी विस्मृति हो रही है और अपनेको 'जीव' मानकर सत्स्वरूप तुम इस असत् शरीरके धर्मोंकी अपनेमें कल्पना करके शरीररूप बन रहे हो, अतएव अपने स्वरूप परमात्माकी प्राप्तिके लिये इस अविद्याके आवरणको हटा देनेके अतिरिक्त और कुछ भी नहीं करना है। इसके लिये 'मैं आत्मा हूँ, परमात्मा स्वरूपत: आत्मासे अभिन्न है, परमात्माके सिवा अन्य कुछ है ही नहीं, एकमात्र परमात्मा ही सर्वत्र सर्वदेशमें तथा सर्वकालमें परिपूर्ण है'—ऐसा सत्य दृढ़ निश्चय करो।

सच्चा अर्थ

याद रखो—सच्चा अर्थ वही है, जो परमार्थका साधक हो, जो मानव-जीवनकी चरम तथा परम सफलतारूप भगवत्प्राप्तिका साधन हो। इसके विपरीत जो संसारमें—संसारके भोगोंमें लगनेवाला है, वह अर्थ 'व्यर्थ' है तथा पापोत्पादक अर्थ तो वास्तवमें 'अनर्थ' रूप ही है।

याद रखो—जिस अर्थका उपार्जन भगवान्‌के अनुकूल पवित्र साधनोंसे एवं जिसका उपयोग भगवत्सेवामें नहीं होता, वह 'व्यर्थ' एवं 'अनर्थ' रूप ही होता है। इसीसे यह 'अर्थ' नामधारी 'अनर्थ' कहा गया है।

याद रखो—स्वभावसे ही 'अर्थ' पंद्रह अनर्थोंको पैदा करनेवाला होता है—१. चोरी, २. हिंसा, ३. झूठ, ४. दम्भ, ५. मद, ६. काम, ७. क्रोध, ८. अभिमान, ९. भेद, १०. वैर, ११. स्पर्धा, १२. लम्पटता, १३. अविश्वास, १४. जूआ और १५. मद्यपान। इस 'अर्थ' नामक अनर्थकी प्राप्तिके साधन, इसकी प्राप्ति, इसकी वृद्धि, इसकी रक्षा, इसके व्यय और इसके नाश—सभीमें अत्यन्त प्रयास, त्रास, चिन्ता, भ्रम तथा शोकका नित्य निवास रहता है।

याद रखो—इस अर्थका मोह माता-पिता, भाई, सुहृद्, मित्र (जिनका जीवन सदा स्नेहसे सना रहना चाहिये) आदिमें भेद तथा वैर उत्पन्न करके परस्पर शत्रुता उत्पन्न करनेवाला होता है। सदाके स्वजन समस्त सौहार्द, आत्मीयता, स्नेहको भूलकर क्षुब्ध, क्रोधित होकर परस्पर शत्रु बन जाते हैं और एक-दूसरेका जीवन नाश करनेमें तत्पर हो जाते हैं।

याद रखो—अर्थके लोभसे मनुष्य परस्पर लड़ाई-झगड़े करते, मुकदमे लड़ते, जीवनकी समस्त शान्तिको खोकर सदा घोर अशान्ति भोगते हुए ही मनुष्य-जीवनको अनर्थोत्पादक सिद्ध करके नष्ट हो जाते हैं।

याद रखो—अर्थकी कामनासे ही अंधे होकर मनुष्य खाद्य पदार्थोंमें, औषधोंमें तथा जीवनोपयोगी वस्तुओंमें अन्य वस्तु मिलाकर, नकली वस्तुओंको उन वस्तुओंका नाम देकर निर्दोष मनुष्योंके प्राणहरणका पाप मोल लेते हैं और अपने लिये नरकका मार्ग प्रशस्त करते हैं।

याद रखो—यहाँकी अर्थसम्पत्तिके एक कणका भी मृत्युके बाद साथ नहीं होता। जीवनभर व्यर्थ ही अर्थ-चिन्ताकी आगमें जलकर मनुष्य अनर्थमय बन जाता है। अतएव अर्थका लोभ छोड़कर प्राप्त अर्थको परमार्थ-प्राप्तिमें सहायक बनाकर विविध भाँतिसे भगवान्‌की सेवामें लगाओ और यदि अर्थ प्राप्त नहीं है तो भगवान्‌की कृपाका प्रत्यक्ष अनुभव करके, जैसे निर्वाह होता है उसीमें संतुष्ट होकर जीवनको भगवत्सेवामें लगाओ।

याद रखो—तुम्हारे पास यदि प्रचुर अर्थ है और यदि तुम उसे अपनी सम्पत्ति मानकर भगवान्‌की सेवामें—जहाँ आवश्यक है, वहाँ नहीं लगाते, तो तुम चोर हो, तुम्हारी इस बेईमानीका दुष्परिणाम तुम्हें भोगना पड़ेगा।

याद रखो—अर्थकी लोलुपतासे या अधिक आवश्यकताकी कल्पनासे तुम दूसरोंका स्वत्व छीनकर, पराया हक मारकर, गरीबों तथा असमर्थोंको सताकर अर्थोपार्जन या अर्थसंग्रह करते हो तो तुम महापाप करते हो। ऐसा अर्थ सर्वथा अनर्थरूप है; वह यहाँ भी तुम्हें जलाता रहेगा, चाहे कुछ दिन अभिमानके मदमें इसका अनुभव न कर सको और परलोकमें तो तुम्हें इसका बड़ा ही भीषण परिणाम भोगना पड़ेगा। अतएव अर्थके लोभमें न पड़कर प्राप्त अर्थका सदुपयोग करो। अप्राप्तकी अन्यायपूर्वक प्राप्तिके साधनसे सदा दूर रहो।

सब कुछ भगवान्‌का

याद रखो—तुम्हारे पास जो कुछ है, सब भगवान्‌का है और भगवान्‌की सेवाके लिये ही है। उसे अपना मानकर उसका केवल अपने भोगमें उपयोग करना बेईमानी है। इस बेईमानीसे बचो और समस्त प्राप्त साधनोंको भगवान्‌की सेवामें लगाओ।

याद रखो—सबमें भगवान् हैं। समस्त जीवोंके रूपमें भगवान् ही अभिव्यक्त हैं। अतएव उनके जिस किसी रूपको जब भी जिस वस्तुकी आवश्यकता हो और वह यदि तुम्हारे पास हो तो 'भगवान्‌की वस्तु भगवान्‌के अर्पण कर रहे हो'—इस भावसे बिना अभिमानके नम्रतापूर्वक उसे समर्पण कर दो।

याद रखो—सच्ची सेवा करनेवाला जगत्‌में सदा-सर्वत्र सबमें भगवान्‌के दर्शन करता है। सेवा करना उसका स्वभाव ही है। वह ऊँच-नीच, अपना-पराया, मित्र-शत्रु नहीं देखता। उसे जब सेवाका अवसर मिलता है, तब वह अपना सौभाग्य समझता है।

याद रखो—सेवाका न विज्ञापन होता है, न दूकान खुलती है। सेवा सेवकका सहज स्वभाव होता है। सेवाका अभिप्राय है, अपने पास जो कुछ भी साधन-सामग्री, तन-धन, विद्या-बुद्धि आदि हैं और जो कुछ भी शक्ति है, वह सब सेवाके लिये है और सेवामें ही विनयपूर्वक किसी प्रकारकी कामना न रखते हुए उनका उपयोग करना।

याद रखो—सेवकमें सात बातें होनी चाहिये—(१) सेवामें विश्वास, (२) सेवाकी पवित्रता, (३) सेवामें निष्कामभाव, (४) सेवामें आत्मसंयम, (५) सेवामें उत्साह, (६) सेवामें प्रीति और (७) विनयभाव।

याद रखो—पापमें सहायता-सहयोग देना सेवा नहीं है। दूसरोंको सतानेवाले, खूनी, डकैत, व्यभिचारी, पराया स्वत्व हरण करनेवाले—ऐसे लोगोंकी उनके इन कामोंमें सहायता करना सेवा नहीं है। इन

कामोंसे तो कर्ताका बड़ा अनिष्ट होता है और किसीके अनिष्ट-साधनमें सहायता करना सेवा नहीं, वह तो पापका समर्थन है।

याद रखो—सेवकमें त्याग तथा विनयका होना परमावश्यक है। बिना त्याग सेवा नहीं होती और विनय हुए बिना अभिमान उत्पन्न होता है। वह जिसकी सेवा करता है, उसको नीचा और अपनेको ऊँचा मानने लगता है। त्याग और निरभिमानता हुए बिना बदला चाहना, कृतज्ञताकी आकांक्षा करना, कृतज्ञ न होने या बदला न चुकानेपर नाराज होकर उसे कृतघ्न मानना, उससे द्वेष करना आदि दोष उत्पन्न होकर सेवाके पवित्र स्वरूपको ही नष्ट कर देते हैं।

याद रखो—सेवक जिसकी सेवा करता है, न तो उसके पूर्व-इतिहासको देखता है, न भविष्यमें उसका कैसा बर्ताव होगा, यह देखता है। वह तो उसकी वर्तमान निर्दोष आवश्यकताको देखता है और सीधे-सादे तौरपर अपने साधन तथा शक्तिके अनुसार उसकी सेवा करता है।

याद रखो—सच्चे सेवककी ममता सेवामें रहती है, उसकी कामना सेवाकी शक्ति बढ़नेकी होती है, उसका अहंकार विनम्रतामें परिणत हो जाता है और वह सेव्यको भगवान्‌के रूपमें और अपनेको नित्य सेवकके रूपमें देखता है।

याद रखो—सेवक न मान-बड़ाई चाहता है, न दूसरोंपर हुकूमत करना चाहता है, न वह किसीको अपना-पराया मानकर राग-द्वेष रखता है, न किसीको अज्ञानी-मूर्ख मानता है या अपनेसे नीचा मानता है, न किसीकी निन्दा-चुगली करता है और न कभी किसीसे अपने लिये आराम, अच्छे भोजन या सेवाकी ही आकांक्षा करता है।

याद रखो—सच्चे सेवकमें प्राणी-मात्रकी सेवाकी भावना सहज रहती है। वह दयालु, निर्मलमन, धैर्यशील, चतुर, उद्यमी, श्रद्धालु, नित्य सत्कर्मपरायण, चरित्रवान्, संयतेन्द्रिय, अत्यन्त विनम्र तथा दूसरोंके हितके लिये ही जीवन धारण करनेवाला होता है। वह

यथासाध्य सेवाको गुप्त रखना चाहता है। सेवा ही उसके जीवनका स्वरूप होता है।

याद रखो—सेवा निष्काम तथा विनम्र चित्तमें प्रकट भगवान्‌का विशुद्ध तथा मधुर प्रसाद है। वह कोई लेन-देनका व्यापार नहीं है और न अभिमान उत्पन्न करके दूसरोंको नीचा दिखानेवाला सदोष प्रयत्न है।

सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥

विवेकसे अनासक्ति

याद रखो—जो मनुष्य यह जान जाता है कि वह जिस मकानमें रहता है उसमें नीचे-ऊपर, चारों ओरकी दीवालोंमें बारूद भरी है और वह जब कभी भी फट सकती है, वह क्या एक क्षण भी उस मकानमें सुखका अनुभव करके टिक सकेगा? क्या उस मकानमें उसकी आसक्ति रह जायगी? इसी प्रकार जब यह मालूम हो जाता है कि इस सुन्दर दीखनेवाली स्वादिष्ट मिठाईमें संखिया विष मिला हुआ है तो क्या कोई उसे खाना चाहेगा? क्या उसे तुरंत छोड़ना नहीं चाहेगा? इसी प्रकार सदसद्विचारके द्वारा, विवेकके द्वारा जब यह निश्चयपूर्वक विश्वास हो जाता है कि संसारके सभी भोग अनित्य दुःख-ज्वालामय और अन्तमें विषके समान मारनेवाले हैं तो क्या मनुष्य इन भोगोंमें आसक्त रह सकता है? इस बातको विवेकसे समझो और संसारके तमाम भोगोंको विषवत् जानकर इनसे अनासक्त बनो।

याद रखो—विवेक होनेपर वैराग्य अवश्य होगा ही। भोग दुःख-ज्वालामय, विषमय हैं—यह ठीक जान लेनेपर उनमें राग रह नहीं सकता। फिर उन्हें मनुष्य तुरंत छोड़ देना चाहेगा। उसे फिर उनमें रहते भय लगेगा। वह चाहेगा, जितनी जल्दी छुटकारा हो जाय, उतना ही अच्छा है। इस प्रकार भोग-जगत्‌से छुटकारा पानेकी इच्छा ही 'मुमुक्षा' है। यह जिसमें है वही 'मुमुक्षु' है। इसीको भगवत्प्राप्तिकी इच्छा कहते हैं। इस इच्छाके जाग्रत् तथा तीव्र हो जानेपर मोक्ष या भगवान्‌की प्राप्ति तुरंत हो जाती है। भगवान्‌की प्राप्तिमें विलम्ब इसीलिये हो रहा है कि उसकी इच्छा तीव्रतम और अनन्य तो है ही नहीं, अभी पूरी जागी भी नहीं है।

याद रखो—जबतक भोगोंमें सुख दिखायी देता है, भोगोंमें सुख है—इस प्रकारकी आस्था है, भोगोंके लिये जी ललचाता है, दूसरोंके पास भोगोंको देखकर उनके भाग्यकी सराहना होती है, उनसे ईर्ष्या

होती है और वैसे ही भोग प्राप्त करनेके लिये मनमें व्याकुलता होती है, तबतक विवेकके द्वारा भोगका असली स्वरूप तुम्हारे सामने प्रकट हुआ ही नहीं। वह विषभरी मीठी मिठाई है, तुमने जाना ही नहीं। चाहे तुम्हारा नाम भक्त हो, महात्मा हो, संत हो, महापुरुष हो, त्यागी-वैरागी हो या कर्मयोगी हो। सच तो यह है कि जबतक तुम भोगोंमें सुख मानकर मनमें भोग-लालसाका पोषण कर रहे हो, तबतक तुम भोगोंके ही गुलाम हो। इसका दूसरा अर्थ है—तबतक तुम अगाध दुःख-सागरमें ही गोते खाते रहोगे!

याद रखो—यदि तुम्हें मानव-जीवन सफल करना है, सच्ची सुख-शान्तिको प्राप्त करना है तो भोगोंकी ओरसे मुँह मोड़कर अपने जीवनका मुख भगवान्‌की ओर कर दो। फिर यदि तुम्हारे पास भोग रहेंगे तो वे तुम्हारी सेवाके लिये तुम्हारे पीछे-पीछे चलनेवाले होंगे। तुम उनकी ओर ललचाई दृष्टिसे नहीं देखोगे। तुम्हारी आँख रहेगी भगवान्‌की ओर, तुम्हारे पैर आगे बढ़ेंगे भगवान्‌की ओर और तुम्हारा चित्त लगा रहेगा भगवान्‌की ओर।

याद रखो—इस अवस्थामें जो भोग तुम्हारे पीछे-पीछे चलेंगे; वे भी भगवत्पूजाकी सामग्री बनकर धन्य हो जायँगे। जिन भोगोंमें मनुष्यकी आसक्ति है और जो मनुष्यके भोग्य हैं, वे स्वयं नरकरूप हैं और भोगनेवालेको भी नरकमें ले जाकर दुःखाग्निमें पकानेवाले हैं। भोगोंसे विरक्ति करके भगवान्‌में अनुरक्त हो जाओ तो तुम्हारा जीवन भी सार्थक होगा और फिर, यदि कोई भोग तुम्हारे साथ रह सकें तो वे भी पवित्र, सार्थक हो जायँगे।

विचारोंके अनुसार मानवका स्वरूप

याद रखो—तुम अपने मनमें जिस प्रकारके विचारोंको स्थान दोगे, जिस प्रकारके विचारोंका पोषण करोगे, वही तुम्हारा आदर्श होगा और तुम सहज ही वैसे ही बनते चले जाओगे। तुम यदि यह निश्चय करोगे—सदा इसी प्रकारके विचारोंका पोषण करते रहोगे कि 'ईश्वर सर्वशक्तिमान् हैं, वे मेरे परम सुहृद् हैं, मैं उनका अपना हूँ, अतएव उनके सहज सौहार्दसे मेरे जीवनमें त्याग, प्रेम, आनन्द, पुण्य, सफलता, दया, परदुःख-कातरता और सबमें भगवान्‌को देखकर सबकी सेवाके भाव सदा जाग्रत् रहेंगे। मेरा जीवन ऐसा ही बन रहा है और बनेगा। मैं जहाँ रहूँगा, वहीं मेरे द्वारा वातावरणमें इन्हीं सद्भावोंका प्रसार होगा। लोगोंके ऐसे सत्-चित्‌के निर्माणमें मैं सहज सहायक बनूँगा।' तो सचमुच तुम ऐसे ही बन जाओगे और दूसरे लोगोंको भी ऐसा बननेमें सहायता दोगे।

याद रखो—जैसे प्रकाश जहाँ जाता है, वहीं अपना प्रकाश फैलाता है। चन्द्रमा जहाँ जाता है, वहीं अमृत बरसाता है, सुगन्धित पुष्प सर्वत्र अपनी सुगन्ध फैलाता है, वैसे ही तुम भी अपने जीवनके द्वारा सर्वत्र प्रकाश, अमृत और सुगन्धका प्रसार कर सकते हो। तुम्हें देखते ही लोगोंके अन्धकारका नाश, विषका शमन और दुर्गन्धका अभाव होने लगेगा और बदलेमें उजियाला, मधुर अमृतरस तथा सुन्दर सुगन्ध पाकर लोग प्रमुदित और पुलकित हो जायँगे।

याद रखो—तुम भगवान्‌के सनातन अंश हो, उनके सभी दिव्य गुणोंका तुम्हारे अन्दर विकास तथा प्रकाश हो सकता है, बस, उनका चिन्तन करो, उनको जगाओ और उनका पोषण करो उनको अपनाकर। तुम्हारा जीवन भगवान्‌के दिव्य गुणोंसे—दैवी सम्पदासे सम्पन्न होकर परम सुन्दर, परम पवित्र, परम सुखमय और परम मधुर मनोहर बन जायगा। फिर तुम्हारे द्वारा इन्हींका प्रसार-प्रचार होगा।

याद रखो—तुम सदा सात्त्विक दैवी विचार रखोगे, तब उन्हींके अनुसार सहज ही तुमसे बर्ताव-व्यवहार होगा। दूसरोंके साथ तुम वैसे ही बरतोगे। परिणाम यह होगा कि सारे जगत्से बदलेमें तुम्हें भी वही सात्त्विक दैवी व्यवहार प्राप्त होगा। इससे परस्पर प्रेम-आनन्द फैलेगा तथा जगत्के अशुद्ध अशान्तिमय वातावरणको भी तुम सहज ही शुद्ध शान्तिमय बनानेमें अपना अमूल्य हिस्सा दे सकोगे। यह भी भगवान्की बहुत बड़ी सेवा होगी तुम्हारे द्वारा। तुम्हारा अपना तो परम कल्याण होगा ही, तुम औरोंको भी कुपथसे हटाकर कल्याणपथपर ला सकोगे।

याद रखो—जगत्की सबसे बड़ी सेवा है जगत्के प्राणियोंमें सद्भावोंको, भगवद्भावोंको जाग्रत् करके उनको बढ़ाना, उन्हें भगवान्की ओर लगाना। यह काम सदुपदेशसे उतना नहीं होता, जितना सत्-जीवनसे होता है। तुम्हारा जीवन पवित्र भगवद्भावसम्पन्न होगा तो उसके द्वारा अपने-आप जगत्के लोग भगवद्भावकी सच्ची शिक्षा-दीक्षा प्राप्त कर सकेंगे। पर यदि तुम अपने अशुद्ध भोगासक्तिमय भावोंसे जगत्के लोगोंके अंदर आसुरी भावोंको भरते, जगाते और बढ़ाते रहोगे तो तुम अपनी तथा जगत्की बहुत बड़ी हानि करोगे। फलस्वरूप तुम्हें स्वाभाविक ही भगवान्का भी कोपभाजन होना पड़ेगा, जिसका रोग-नाशके लिये कड़वी दवाकी भाँति, मंगलमय दयामय भगवान् तुम्हारे लिये मंगल विधान करेंगे!

याद रखो—यदि तुम अपने अंदर रहे परमात्माको जगा सके, देख सके, उनके प्रति अपनेको अर्पण करके उनके आदेशानुसार चल सके और उनके दिव्य गुणोंका अपने अंदर विकास-प्रकाश कर सके तो तुम्हारा मानव-जीवन परम सफल होगा। तुम जगत्में धन्य ही नहीं बनोगे, तुम तो तरन-तारन बन जाओगे। तुम्हारे अंदर भगवान् नित्य विराजित हैं, उनके साथ ही उनके दिव्य गुण भी, दिव्य भाव भी वर्तमान हैं। उनको देखो, प्रकाश करो और उन्हें अपने सहज जीवनमें उतारकर धन्य हो जाओ।

ममता ही बन्धन है

याद रखो—संसारके प्राणी-पदार्थोंमें ममता ही बन्धन है और ममताका सर्वथा अभाव ही मुक्ति है। ममता न होनेका अभिप्राय है संसारमें कभी, किसी भी वस्तुमें, परिस्थितिमें, प्राणीमें जिसका मेरापन न हो। जिसके कुछ भी अपना नहीं है, जो सर्वथा अकिंचन है, वही ममता-बन्धनसे रहित मुक्त है।

याद रखो—सांसारिक प्राणी-पदार्थोंकी ममतासे मुक्त पुरुषसे भगवान् स्वयं ममत्व करते हैं। वह भगवान्को अत्यन्त प्रिय होता है। वही भगवत्प्रेमी भगवान्का सहज भजन करनेवाला है। जिनके मनमें जन्म, ऐश्वर्य, विद्या, परिवार, धन, बुद्धि, मत आदिमें ममता होती है, वे तो इनके द्वारा शरीर तथा नामके अभिमानको ही पुष्ट करते हैं। वे भजनपरायण नहीं हो सकते।

याद रखो—यथार्थरूपसे भजन करनेमें समर्थ वे ही अकिंचन पुरुष होते हैं, जिनमें किसी भी प्राणी, पदार्थ या परिस्थितिमें तनिक भी ममताका लेश नहीं रह गया है; क्योंकि भगवान् अकिंचनके सर्वस्व हैं और अकिंचनसे ही मिलते हैं। इसीलिये उनको 'अकिंचन-गोचर' कहा गया है।

याद रखो—ममता ही दुःखोंकी जड़ है। जिस वस्तु या प्राणीमें तुम्हारी ममता नहीं होती, उसके नष्ट हो जाने या मर जानेपर तुम जरा भी दुःखी नहीं होते, चाहे वह दूसरेकी दृष्टिमें कितनी बहुमूल्य या महान् प्रिय हो। पर जहाँ ममता है वहाँ जरा-सा भी उसका क्षय या उसके नाशकी सम्भावना ही दुःखदायी बन जाती है और यह निश्चय है कि संसारका कोई भी वस्तु या प्राणी तुम्हारा है नहीं। तुमने मिथ्या ही उनमें ममत्व कर रखा है। जब तुम मरोगे, तब कोई भी ममताका पदार्थ या प्राणी तुम्हारा नहीं रहेगा। सभीसे ममताका सम्बन्ध बलात् छूट जायगा; परंतु उस सम्बन्धके छूटते समय तुम्हें अत्यन्त दुःख होगा।

याद रखो—यदि तुम पहलेसे ही सब प्राणी-पदार्थोंसे ममताका सम्बन्ध तोड़कर आसक्तिसे मुक्त हो जाते हो तो तुम्हारे दुःखकी सम्भावना ही नष्ट हो जाती है। फिर तुम्हें न तो मरणकालमें दुःख होगा, न उसके बाद ही।

याद रखो—जिसकी जगत्‌में कहीं भी ममता नहीं रहती, उस अकिंचनको भगवान् अपनाकर उसके हृदयमें अपनी ममताका उदय कर देते हैं। वह भगवान्‌में ममतायुक्त होकर केवल भगवान्‌को ही अपना मानने लगता है। भगवान् नित्य सत्य सनातन सच्चिदानन्द-स्वरूप हैं, उनका कभी अभाव होता ही नहीं। अतएव भगवान्‌में ममता करनेपर भगवान्‌का नित्य सांनिध्य प्राप्त हो जाता है। भगवान्‌के सारे दिव्य गुण अपने-आप उसमें आ जाते हैं और वह सदाके लिये भगवान्‌का होकर सफल-जीवन हो जाता है।

याद रखो—सचमुच ही तुम भगवान्‌के हो। वे तुमको स्वभावसे ही सदा अपना मानते हैं; परंतु तुम अपनेको उनका नहीं मानते तथा अपनेको सदा विनाशी तथा दुःखयोनि भोगोंके दासत्वमें नियुक्त रखते हो। इसीसे भगवान् जो नित्य तुम्हारे हैं, जो एकमात्र ही तुम्हारी ममताकी वस्तु हैं, तुम उनसे वंचित हो रहे हो। तुम निश्चयरूपसे समझ लो, भगवान् तुम्हारे हैं। वही तुम्हारी ममताके यथार्थतः एकमात्र वस्तु हैं। उनपर तुम्हारा स्वभावतः ही अधिकार है और तुम सदा ही एकमात्र उनके हो, उनकी ही ममताकी वस्तु हो। तुमपर किसी भी दूसरेका कभी अधिकार नहीं है, उन्हींका सम्पूर्ण अधिकार है। जिस क्षण तुम यह समझ लोगे, उसी क्षण तुम्हारी सारी ममता उनमें हो जायगी और वे तो तुमको अपना मानते ही हैं। बस, तुम निहाल हो जाओगे।

भगवान्‌की स्मृतिकी महत्ता

याद रखो—श्रीभगवान्‌की 'स्मृति' ही महान् पुण्य, परम सौभाग्य, अतुलनीय बुद्धिमत्ता, आदर्श सद्‌गुण, दिव्य सम्पत्ति है और समस्त सद्‌वृत्तियोंकी जननी है तथा भगवान्‌की 'विस्मृति' ही घोर पाप, दुःसह दुर्भाग्य, महामूर्खता, जघन्य दुर्गुण, दारुण विपत्ति है और समस्त असत् वृत्तियोंको उत्पन्न करती है।

याद रखो—रजोगुण तथा तमोगुणकी प्रबलता भगवान्‌की विस्मृतिसे ही होती है और उसीसे अहंकार, अभिमान, द्वेष, क्रोध, हिंसा, मिथ्या आचार आदि बढ़कर मनुष्यके इहलोक और परलोकको घोर दुःखमय बना देते हैं। इन दुर्गुणों, दुराचारों तथा दुष्ट वृत्तियोंसे बचना चाहते हो तो निरन्तर भगवान्‌का स्मरण करो। भगवान्‌का स्मरण करते हुए समस्त वैध कार्य भगवत्-सेवाके रूपमें करने लगो, तब ये सारी असत् वृत्तियाँ नष्ट हो जायँगी, जीवमात्रमें निरन्तर भगवान्‌के दर्शन होंगे और तुम्हारा प्रत्येक कार्य भगवान्‌की पूजा बन जायगा।

याद रखो—प्रत्येक जीवमें भगवान् बस रहे हैं, प्रत्येक जीव भगवान्‌का शरीर है अथवा भगवान् ही प्रत्येक जीवके रूपमें प्रकट हो रहे हैं। यह निश्चय करके प्रत्येक जीवका सम्मान करो, प्रत्येक जीवको सुख पहुँचाओ और प्रत्येक जीवका हित-साधन करो। किसीको हीन मत समझो, किसीको नीचा मत समझो। हीनता, दीनता, नीचापन समझना चाहो तो अपनेमें समझो और है भी सचमुच यही बात।

याद रखो—जो भगवान्‌के सामने अपनेमें हीनता-दीनता समझकर सदा नत रहता है, उसीपर भगवान्‌की कृपा-वर्षा होती है। भगवान्‌को दैन्य प्रिय है और अभिमान अप्रिय। वे अभिमानको चूर्ण करते हैं और दीनको अपनाते हैं। भगवान् जिसको अपनाते हैं, वही वास्तवमें महान् भाग्यशाली और शुभ चरित्रवान् है। जो भोगोंका गुलाम है, जिसपर अनित्य तथा दुःखयोनि भोगोंका आधिपत्य है, वह अत्यन्त अभागा

तथा पापजीवन है। वह यहाँ और वहाँ केवल दुःख ही पैदा करता है और दुःख ही भोगता है।

याद रखो—जो स्वयं अभिमानसे रहित और दूसरोंको मान देनेवाला है, स्वयं आशासे रहित और दूसरोंकी आशाओंको यथासाध्य पूर्ण करनेवाला, अपने दुःखको दुःख न मानकर दूसरेके सुखके लिये सब प्रकारके दुःखोंको वरण करनेवाला है और अपने अधिकारका त्याग करके दूसरोंके अधिकारकी रक्षा करनेवाला है; वही वस्तुतः सबमें भगवान्‌को देखकर सबकी सेवा करनेवाला है। 'सबमें भगवान् ही हैं'—यों केवल मुँहसे कहनेवाला नहीं।

याद रखो—जो सबमें भगवान् जानकर, भगवान्‌का नित्य अखण्ड स्मरण करते हुए भगवान्‌की सेवाके लिये ही सब काम करता है, वही वास्तवमें परम पुण्यवान् , महान् सौभाग्यशाली, यथार्थ बुद्धिमान् , सर्वसद्गुण-विभूषित, सदा सुसम्पन्न और सम्पूर्ण सद्वृत्तियोंका समुद्र बन जाता है। वह प्रतिक्षण, अपने जीवनके प्रत्येक स्तरसे और प्रत्येक चेष्टासे समस्त जगत्‌में दैवी सम्पत्तिका, भगवद्भावोंका, स्वयं भगवान्‌का ही वितरण करता रहता है। उसीका जीवन सफल है, वही धन्यजीवन है।

याद रखो—ऐसा आदर्श पुरुष स्वयं ही धन्यजीवन नहीं होता, वह अपने जन्म और जीवनसे अपने देशको, धर्मको जातिको तथा माता-पिताको भी धन्य कर देता है और युगोंतक वह जन-जनके जीवनको उच्च स्तरपर पहुँचानेवाला परम आदर्श बन जाता है।

जीवनका उद्देश्य भगवान्

याद रखो—जबतक तुम्हारे जीवनका एकमात्र उद्देश्य भगवान् न होंगे, जबतक तुम भगवान्के सम्मुख होकर उनको प्राप्त करनेके साधनोंको स्वीकार न कर लोगे और जबतक तुम उन साधनोंको क्रियारूपमें परिणत न कर दोगे, तबतक तुम कभी भी, किसी भी स्थितिमें शान्ति-सुख-संतोषके दर्शन नहीं कर सकोगे।

याद रखो—अपूर्ण अनित्य और परिवर्तनशील जगत्प्रपंचके प्राणी, पदार्थ, परिस्थितिमें कभी शान्ति-सुख हैं ही नहीं; उनमें निरन्तर अपूर्णताका दुःख, नष्ट हो जानेका दुःख और बदल जानेका दुःख लगा रहता है। सच्चा सुख एकमात्र नित्य निरतिशय परिपूर्णतम, अविनाशी सदा अखण्ड एकरस श्रीभगवान्में ही है। जीवनका लक्ष्य बनाकर, अतएव उन्हींको उन्हींकी प्राप्तिके साधनोंको स्वीकारकर तदनुसार जीवन बनाओ।

याद रखो—कोई भी मनुष्य किसी स्थानपर पहुँचना चाहे तो उसके लिये तीन बातें परमावश्यक हैं—जहाँ पहुँचना है, उसको याद रखे; जिस रास्तेसे वहाँ पहुँचा जा सकता है उसी रास्तेको अपनावे और उसी रास्तेपर चलता रहे। लक्ष्य-स्थान याद न रहा, तब तो कुछ भी नहीं होगा। वह जायगा ही कहाँ! लक्ष्य याद भी रहा, पर यदि विपरीत—उलटे मार्गको स्वीकार कर लिया, तब भी वहाँ नहीं पहुँच सकता एवं यदि ठीक रास्तेपर होनेपर भी चले नहीं—रुका ही रहे, तब भी पहुँचना सम्भव नहीं। अतएव लक्ष्यको भूलो मत, निरन्तर याद रखो; लक्ष्यसिद्धिके साधनोंको स्वीकार करो और उन साधनोंको अपनी शक्तिके अनुसार सावधानीसे करते रहो।

याद रखो—भगवान्की ओर मुख करके उनके मार्गपर चलना आरम्भ कर दोगे तो जितना ही आगे बढ़ोगे उतनी ही चलनेकी शक्ति बढ़ेगी, उतने ही अच्छे-अच्छे सदा सहायता तथा सेवा करनेवाले प्रिय साथी मिलेंगे, उत्तरोत्तर उत्तम सुखमय मार्ग मिलेगा, प्रकाश मिलेगा, स्वस्थता मिलेगी, दैवी-सम्पत्तिपर अधिकार होता जायगा और सहज ही

सच्चे शान्ति-सुख बढ़ते रहेंगे; क्योंकि वह मार्ग ही ऐसा है, जिसपर दैवी-सम्पदासम्पन्न पुरुष ही जाते हैं और वहाँ उत्तरोत्तर अधिक-से-अधिक दैवी-सम्पत्तिका ही आदान-प्रदान चलता है।

याद रखो—भगवान्‌से विमुख होकर भोग-जगत्‌की ओर मुख करके उसके मार्गपर चलोगे तो जितना ही आगे बढ़ोगे, उतनी ही सात्त्विकी शक्तिका ह्रास होगा, उतने ही नीच नराधम, सदा सताने तथा लूटनेवाले चोर, ठग, लुटेरे, बदमाशोंका संग मिलेगा, उत्तरोत्तर दुःखमय मार्ग मिलेगा, कंकड़-पत्थर-काँटे-गड्हे मिलेंगे, अन्धकार मिलेगा। मानसिक और शारीरिक रोग मिलेंगे, आसुरी सम्पत्तिके सारे दुर्गुण, दुर्विचार, दुष्कर्म आकर तुमपर अपना एकाधिकार कर लेंगे और सहज ही तुम असीम अशान्ति, अपार दुःखके स्वरूप ही बन जाओगे; क्योंकि वह रास्ता ही ऐसा है जहाँ आसुरी सम्पत्तिका ही उत्तरोत्तर अधिक विस्तार है, वहाँ वैसे ही लोग रहते हैं और उनमें परस्पर आसुरी सम्पदाका ही आदान-प्रदान चलता है।

याद रखो—दैवी सम्पत्ति मोक्षके लिये है और आसुरी बन्धनके लिये। दैवी सम्पदावालोंके साथ सदा शान्ति, सत्कर्म तथा सुख रहते हैं। वे यहाँ सुख-शान्तिपूर्वक पुण्य कर्म करते हुए भगवान्‌को प्राप्त होते हैं और आसुरी सम्पदावालोंके साथ सदा अशान्ति, पाप और दुःख रहते हैं। वे जीवनभर चिन्ताग्रस्त अशान्त जीवन बिताते हुए कुकर्ममें निरत रहते हैं और अन्तमें नरकोंको प्राप्त होते हैं। दैवी सम्पदा भगवत्प्राप्तिका मार्ग है और आसुरी सम्पदा नरकप्राप्तिका।

याद रखो—असुरोंको अपार वैभव, जागतिक प्रचुर सम्पत्ति, विस्तृत अधिकार, परम उच्च पद और लौकिक यशकीर्ति आदि पदार्थ मिल सकते हैं, पर इनसे उन्हें सच्ची शान्ति, सच्चा सुख कदापि नहीं मिल सकता; वे जीवनभर जलते ही रहते हैं और दुष्कर्मपरायण रहकर अन्तमें भीषण यन्त्रणा—ज्वालामय नरकोंमें पड़ते हैं। अतएव सच्चे सुखस्वरूप भगवान्‌को ही जीवनका एकमात्र साध्य बनाओ और उन्हींकी प्राप्तिके लिये सावधानी तथा एकनिष्ठाके साथ तदनुकूल साधनोंमें सदा तत्पर रहो।

विनयकी महत्ता

याद रखो—जो पलड़ा नीचा होता है, वही भारी होता है। वैसे ही जो विनयशील, मानका त्यागी तथा दूसरोंको सम्मान देनेवाला होता है, अपनेको सबसे नीचा मानकर विनम्र बर्ताव करता है, सबमें भगवान्‌की अभिव्यक्ति देखकर जो सबके सामने सिर झुकाता है तथा सबकी सेवा करता है; इन गुणोंके कारण वस्तुतः वही भारी है। इस क्षेत्रमें नीचा ही ऊँचा है और व्यर्थ अभिमानके ऊँचे पहाड़पर रहनेवाला ही नीचा है।

याद रखो—विनयीसे सब प्रसन्न रहते हैं, सेवकसे सबको सुख मिलता है, सभी सबको हृदयसे चाहते हैं और अपना मानते हैं। भगवान्‌की तो परम कृपा उसे मिलती ही है; क्योंकि सबमें भगवान् देखनेवालेके सामनेसे भगवान् तो कभी एक क्षणके लिये हटते नहीं। वह सदा सर्वत्र सबमें भगवान्‌को देखता है तो भगवान् उसको देखते रहते हैं।

याद रखो—विनयी पुरुषके मित्र बढ़ते हैं और अभिमानीके शत्रु। विनयीके कहीं गिरनेपर लोग उसे उठाने दौड़ते हैं तो अभिमानीको धक्के और ठोकर मिलते हैं। विनयीको कहीं अपमान-तिरस्कारका अनुभव नहीं होता; क्योंकि वह अपमान-तिरस्कारको कुछ समझता ही नहीं और अभिमानीको बार-बार अपमान-तिरस्कारकी चोट लगती रहती है। कोई भी स्वाभाविक आकृति, चाल तथा शब्द ही उसपर मर्माघात करने लगते हैं। ये सब विपत्तियाँ अभिमानीकी अपनी बुलायी होती हैं और वे सदा उसके साथ लगी रहती हैं। उनके संगी-साथी तथा परिवारकी वृद्धि होती रहती है। पर विनयीके पास ऐसी दैवी सम्पदाका सुदृढ़ किला रहता है कि उसमें इन विपत्तियोंका कभी प्रवेश ही नहीं हो सकता।

याद रखो—विनयी पुरुषके द्वारा ही किसीका सेवा-सत्कार हो सकता है। अभिमानी तो अपनी ऐंठमें ही रहता है, वह अभिमानवश गुरुजनोंका भी अपमान कर बैठता है। इससे वह उनकी सद्‌भावना एवं आशीर्वादसे वंचित रह जाता है। शिक्षा ग्रहण करनेमें भी अभिमानसे

बहुत बड़ी बाधा आती है; क्योंकि अभिमानी मनुष्य किसीसे कुछ भी पूछने-जाननेमें अपना अपमान समझता है, वह किसीको भी किसी विषयमें अपनेसे ऊँचा माननेको तैयार ही नहीं होता। वह भगवान्‌से भी अभिमानवश दूर ही रहता है। संतोंका भी तिरस्कार करता है। इसीसे भगवान् भी सच्चे चिकित्सक वैद्यकी भाँति अभिमानीका अभिमान नाश करनेके लिये उसके साथ द्वेषकी लीला करते हैं और विनयीके दैन्यके कारण उसके प्रति स्नेह-लीलाका प्रकाश करते हैं।

याद रखो—विनयीके हृदयमें सदा शान्ति रहती है और अभिमानीका हृदय जलता रहता है। वह किसीकी भी उन्नति, प्रगति, उत्थान, समृद्धि तथा कीर्तिकी बात सुन लेता है तो उसे सह नहीं सकता और उसके हृदयकी द्वेषाग्नि बड़े वेगसे भड़क उठती है। उसी जलनको मिटानेके लिये यह ऐसे कुकर्म भी कर बैठता है जो उसकी उस आगको भीषण दुःखदावाग्नि एवं नरकानल बनाकर जलनको और भी तीव्र तथा भयानक कर देते हैं।

याद रखो—सच्चा विद्वान् तथा बुद्धिमान् भी वही है, जिसमें विनय है। विद्याका अवश्यम्भावी फल ही है विनयकी प्राप्ति और विनयके आते ही पात्रता तथा समृद्धि भी आ जाती है। इस प्रकार जो सुख-शान्ति प्रदान करनेवाली पात्रता एवं समृद्धिका सम्पादन कर लेता है, वही बुद्धिमान् है।

याद रखो—फलवाले वृक्ष झुक जाते हैं और अपने अमृत-स्वादी फलोंसे जन-जनको तुष्ट करते हैं, पर अफलवृक्ष सीधे तने खड़े रहते हैं और सबकी उपेक्षाके पात्र होते हैं। सब प्रकारके उत्तम लाभ विनयमें ही हैं। अतः तुम भी विनयी बनो और उससे सबको अपना बना लो।

याद रखो—विनय असली होना चाहिये, दिखावटी नहीं। दिखावटी विनय तो एक प्रकारका छल है जो अपनेको धोखा देता है। अतः दिखावटी विनय न करके असली आदर्श विनयका अर्जन तथा व्यवहार करो।

संसार रंगमंच

याद रखो—संसारमें इस शरीरसे तथा शरीरके सम्बन्धी प्राणी-पदार्थमात्रसे तुम्हारा वैसा ही सम्बन्ध है, जैसा रंगमंचपर अभिनय करनेवाले अभिनेताका अपने स्वाँगसे, नामसे और वहाँके अन्यान्य नाम-रूपधारी अभिनेताओं तथा वहाँके कार्योंसे होता है।

याद रखो—जैसे वह अभिनेता उस रंगमंचपर अपनेको वही बताता है जो स्वाँग धारण किये है; वहाँ किसीको पिता, किसीको माता, किसीको पुत्र, किसीको मित्र, किसीको अपना, किसीको पराया बताकर व्यवहार करता है। वहाँ उसको राज्य भी मिल सकता है, पुत्र भी मर सकता है, वह रोता-हँसता भी है। वह अपने स्वाँगके अनुसार सभी रसोंका प्राकट्य करता है; पर वह कभी किसी कालमें भी वहाँकी किसी वस्तुको, किसी प्राणी-पदार्थको, किसी क्रियाको तथा अपने नाम-रूपको भी वास्तवमें सत्य नहीं मानता। वह जानता है, मैं इस पोशाक तथा नामको ग्रहण करके, ऐसे ही अन्यान्य खेल करनेवाले अभिनेताओंके साथ खेल करता हूँ। वैसे ही तुम भी एक अभिनेता हो; तुम्हारे ये नाम-रूप केवल खेलनेको मिले हैं, ये तुम्हारे वास्तविक स्वरूप नहीं हैं।

याद रखो—रंगमंचपर मिले हुए सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान, धनप्राप्ति-धननाश, पुत्रप्राप्ति-पुत्रमरण, विजय-पराजय, प्रिय-अप्रिय, सिद्धि-असिद्धि, मित्र-शत्रु आदि केवल अभिनयमात्र हैं। वह अभिनेता इन सभी द्वन्द्वोंसे अपनेको सर्वथा परे तथा इन्हें खेलमात्र मानकर अपने अंदर इनसे निर्लेप रहता है। न कभी इनमें उसकी आसक्ति होती है न द्वेष, न ममता होती है न द्रोह, न इनकी कामना होती है न वासना। वह सारे कार्य अपने स्वाँगके अनुसार यथाविधि सुचारुरूपसे करता हुआ भी निर्द्वन्द्व रहता है। वैसे ही तुम भी इस संसारमें सब कुछका केवल इस शरीर और नामसे ही सम्बन्ध मानकर,

यहाँ अभिनेताकी भाँति सारे काम भलीभाँति करते हुए भी निष्काम, अनासक्त, निर्लेप रहो।

याद रखो—कोई अभिनेता रंगमंचकी पहनी पोशाक, गहने आदिपर या वहाँ बने हुए पुत्र, पत्नी आदिपर वस्तुतः अपना अधिकार करना चाहे या उन्हें अपना बतावे तो वह जैसे पागल या अपराधी माना जाता है और उसे यथाविधि शिक्षा या दण्ड दिया जाता है। वह वस्तु तो उसकी होती ही नहीं, क्योंकि वह कभी उसकी थी ही नहीं। वह तो खेलमात्रके लिये उसे मिली थी। वैसे ही इस संसारके प्राणी-पदार्थोंपर ममता करके जो उनका मालिक बनना चाहता है, उसको वे प्राणी-पदार्थ तो मिलते ही नहीं, वह उलटा दण्डका पात्र होता है और दुःखी होता है।

याद रखो—जब अभिनेता रंगमंचपर स्वाँग धारण करके नहीं आया था, तबतक वह जैसे अपने स्वरूपमें था वैसे ही स्वाँग धारण करके रंगमंचपर अभिनय करनेके लिये आनेपर भी वह अपने स्वरूपमें ही है। केवल अपने प्रभुका बताया हुआ अभिनय करनेके लिये रंगमंचपर दूसरा नाम-रूप धारण करके आया है। इसी प्रकार तुम भी इस शरीर और नामको धारण करके प्रभुकी प्रीतिके लिये खेल करने आये हो, इस बातको याद रखते हुए अपने स्वाँगके अनुसार प्रभु-प्रीत्यर्थ खेल करते रहे। अपनेको सदा प्रभुका आदेश पालन करनेवाला सेवक बनाये रखो। जबतक वे नाम-रूप देकर संसारमें काम कराना चाहते हैं, तबतक अपने स्वाँगके अनुसार काम करते रहो। पर सदा यही दृढ़ अनुभव करते रहो कि इस कामसे तथा जिनके साथ तुम्हारे इस कामको लेकर व्यवहार होता है, उनसे वस्तुतः तुम्हारा कोई भी सम्बन्ध नहीं है। तुम्हारा सम्बन्ध तो केवल प्रभुसे है। वे तुम्हारे बहुत ही भले नित्य मालिक हैं और तुम उनकी रुचिके अनुसार चलनेवाले नित्य सेवक हो।

याद रखो—प्रभुका सेवक वही है, जिसपर दूसरे किसीका—

किसी भी प्राणी-पदार्थ-परिस्थितिका अधिकार नहीं है तथा जो प्रभुकी सेवाको छोड़कर किसी भी प्राणी-पदार्थ-परिस्थितिपर अपना अधिकार नहीं मानता। ऐसा अनन्य सेवक ही प्रभुका यथार्थ सेवक है और प्रभु भी उसीके अनन्य स्वामी हैं।

भगवान्‌में जोड़नेवाले प्राणी-पदार्थ ही परम हितैषी हैं

याद रखो—संसारके भोग परिवर्तनशील, अपूर्ण तथा विनाशी हैं, अतएव संसार-भोगोंमें आसक्त मनुष्योंको कभी सुख नहीं मिल सकता। वे सुख-दुःख, लाभ-हानि, मान-अपमान, स्तुति-निन्दा, प्रिय-अप्रिय, शुभ-अशुभ आदि द्वन्द्वोंके मोहमें फँसे हुए दिन-रात अशान्ति तथा चिन्तामें डूबे रहते हैं। एकमें अनुकूलताका अनुभव करते हैं, दूसरेमें प्रतिकूलताका। अनुकूलताकी प्राप्ति तथा प्रतिकूलताके विनाशके लिये अनवरत विचार और प्रयत्न करते रहते हैं और इसी मोहमें पड़े हुए वे पापकर्मोंमें संलग्न तथा पवित्र कर्मोंसे दूर रहने लगते हैं। भगवान्‌का भजन उनके लिये असम्भव-सी वस्तु बन जाता है। उनका भोगपरायण जीवन भगवद्विमुख होकर नरक-स्वरूप बन जाता है और वे नरककीटके सदृश उसीमें रचे-पचे जीवनके अमूल्य क्षणोंको पापसंचय और उसके फलस्वरूप भविष्यके घोर पतनका साधन बनानेमें ही बिता देते हैं। संसारके चाहे प्रचुर भोग उन्हें मिल जायँ अथवा वे सर्वथा भोगरहित रहें—वे सदा ही बढ़ते रहते हैं—आत्म-पतन—आत्म-विनाशकी ओर ही!

याद रखो—जिनका जीवन भगवान्‌से जुड़ जाता है, जिनके जीवनकी गति भगवान्‌के सम्मुख हो जाती है, वे इन द्वन्द्वोंके फंदेसे निकल जाते हैं। वे जान जाते हैं कि इन द्वन्द्वोंका सारा सम्बन्ध केवल नाम-रूपसे है—शरीर और नामसे है—जो दोनों ही आत्मासे पृथक् केवल इस जन्मकी यात्राके लिये मिले हैं; उनके साथ होनेवाले किसी परिणाम और व्यवहारसे आत्माका अपना जिनका वास्तविक कोई भी सम्बन्ध नहीं है। ऐसे द्वन्द्व-मोहसे मुक्त पुरुष ही वस्तुतः दृढ़ निश्चयके साथ भगवान्‌का भजन करते हैं।

याद रखो—भोगपरायण मनुष्योंको चार चीजें मिलती हैं—अपार अशान्ति, अनवरत दुःख, पापाचरण और मरणोत्तर नरक एवं आसुरी योनियोंकी प्राप्ति। इसके विपरीत भगवत्-परायण पुरुषोंको निर्मल शान्ति, उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ सुख, पुण्यकर्मोंका आचरण और मरणोत्तर सद्गति या भगवत्प्राप्ति।

याद रखो—मनुष्य-जीवन यदि भगवत्प्राप्तिके साधनमें न लगकर—भगवान्‌के सम्मुख न होकर कामोपभोगपरायण हो गया तो वह पशु-जीवनसे भी अधिक बुरा है। पशु आदि योनियोंमें जीव कर्मफल भोगकर क्रमशः कर्म-ऋणसे मुक्त होता है। परंतु भोगपरायण मनुष्य तो नित्य नये पापकर्मोंका संग्रह करके अपने भविष्यका विनाश करता है। मनुष्यकी बुद्धि भोगपरायण होकर जितनी काम, क्रोध, लोभ आदि दोषोंको बढ़ाती तथा उनके फलस्वरूप पतन कराती है, उतनी और वैसी बुद्धि पशु आदिमें होती ही नहीं। मनुष्यकी बुद्धि ही तामसभावापन्न होनेपर भयंकर-से-भयंकर पापोंकी नयी-नयी योजनाएँ बनाती एवं उनके अनुसार जीवनका निर्माण करती है।

याद रखो—वह सम्पत्ति सम्पत्ति नहीं है, वह सुख सुख नहीं है, वह सौभाग्य सौभाग्य नहीं है, वह बुद्धि बुद्धि नहीं है, वह कर्म कर्म नहीं है, वह आत्मीय आत्मीय नहीं है और वह पदार्थ पदार्थ नहीं है, जो भगवान्‌से विमुख करते हैं। असलमें भगवान्‌से विमुख करनेवाली, भोगोंमें लगाकर पापपरायण बनानेवाली सम्पत्ति विपत्ति है, सुख-दुःख है, सौभाग्य दुर्भाग्य है, बुद्धि कुबुद्धि है, कर्म कुकर्म है, आत्मीय शत्रु है और पदार्थ अपदार्थ हैं। भगवान्‌में लगानेवाले प्राणी-पदार्थ ही सर्वथा और सर्वदा हमारे हितैषी हैं। उन सारे हितैषियोंका संग्रह करो, उन्हें अपनाओ, उनका समादर करो—चाहे उनके नाम विपत्ति, दुर्भाग्य, दुःख आदि ही क्यों न हों।

विचार और आचरण

याद रखो—मनुष्य-जीवनके वास्तविक स्वरूपका पता उसके बाहरी वेष-भूषासे नहीं लगता, उसके विचार तथा आचरणसे ही लगता है। जिसके जैसे विचार और आचरण हैं, वैसा ही उसका स्वरूप है। अतएव तुम निरन्तर अपने विचार तथा आचरणको सँभालते रहो।

याद रखो—जबतक तुम्हारा विवेक जाग्रत् है, तभीतक तुम्हें अपने अच्छे-बुरे विचार और आचरणका पता लगेगा। मनुष्यका विवेक जब लुप्त हो जाता है, तब उसकी अच्छा-बुरा देखने-परखनेकी दृष्टि नष्ट हो जाती है और बुरे वातावरण तथा चिन्तनसे यदि बुराईमें अच्छाई दीखने लगती है, तब तो उसका अनायास ही पतन हो जाता है; क्योंकि तब उसकी धारणामें पाप करनेपर 'मैं पुण्य करता हूँ' ऐसी मिथ्या अनुभूति होती है और वह पापमें सफलता प्राप्त करनेपर अपनेको गौरवशाली तथा सफल-जीवन मानता है। इसलिये जहाँतक बने विशुद्ध सत्संग तथा शुद्ध स्वाध्यायसे विवेकको जाग्रत् रखो।

याद रखो—पतन जितना सहज और शीघ्र होता है, उतना सहज शीघ्र उत्थान नहीं होता। फिसलाहटसे भरा है जगत्। सावधान रहो, सदा गिरनेसे बचो और निरन्तर ऊपर उठने अथवा सन्मार्गपर आगे बढ़नेका प्रयास उत्साहपूर्वक करते रहो।

याद रखो—विवेक नष्ट होकर मनुष्यका जो पतन होता है, उसमें सबसे प्रधान कारण है कुसंग। कुसंग केवल किसी पतित मनुष्यके संगको ही नहीं कहते। प्रत्येक इन्द्रियका प्रत्येक विषय ही कुसंग बन सकता है। जिस प्राणी-पदार्थके देखने, सुनने, सूँघने, चखने और स्पर्श करनेसे पापमें पुण्यकी तथा बुराईमें भलाईकी धारणा होती हो, भोगोंके लिये अनुचित लालसा जगती हो वह सभी कुसंग है। साहित्य, दृश्य, मनुष्य, भोजन-पान, वस्त्राभूषण, स्थान, वार्तालाप—सभी कुसंग बन सकते हैं। अतएव कुसंगसे सदा बचते रहो। सत्संगका सदा सेवन करो।

याद रखो—सत्संग किसी प्राणी, स्थान या वस्तुका नाम नहीं है। सत् हैं भगवान्, सत् है सदाचार, सत् है सद्विचार—जिस संगसे श्रीभगवान्में प्रीति बढ़ती हो, सदाचार और सद्विचारोंका उदय और संवर्धन सहज ही होता हो, वही सत्संग है। सत्संगको अमूल्य धन समझो, सत्संगके साथ किसी भी धन, सौभाग्य या पुण्यकी तुलना नहीं हो सकती। सत्संग मनुष्यको समस्त पाप-तापसे सर्वथा छुड़ाकर दिव्य पुण्यमय तथा सुखमय बना देता है। सत्संग अतुलनीय धन है।

याद रखो—विषयी जगत्का संग एक बार सुहावना लगता है और वह लगता है इन्द्रियोंके बहिर्मुखी—भोगमुखी स्वभावके कारण ही। पर विषयी जगत्का संग वस्तुतः मीठे विषके समान है। उसका तत्त्व-रहस्य न जाननेके कारण ही उसमें सुख तथा प्रिय बुद्धि हुआ करती है। जिनकी विवेककी आँखें खुली होती हैं, वे प्रत्यक्ष देख पाते हैं उसके भीतरी असली भयानक रूपको और उसके द्वारा होनेवाले घोर विनाशमय परिणामको। इसलिये जहाँतक बने, प्रयत्नपूर्वक मन तथा इन्द्रियोंको अन्तर्मुखी करो, उन्हें सत्में लगाये रखो, भगवान्के साथ नित्य-निरन्तर जोड़े रखनेका प्रयत्न करो। तभी मानव-जीवन सफल होगा और जीव-जीवनका दुःखमय प्रवाह सूखेगा।

सर्वोत्तम सुखका साधन—संतोष

याद रखो—संसारमें सर्वोत्तम सुखकी प्राप्तिका परम साधन है—'संतोष'। असंतोषी मनुष्य सदा ही दुःखी रहेगा, चाहे उसको कुछ भी, कैसी भी वस्तु या परिस्थिति प्राप्त हो जाय। परंतु भगवद्भजन, भगवत्प्रेममें संतोष महान् विघ्नरूप हैं। सांसारिक भोगोंमें संतोष साधन है और भगवद्भजनमें संतोष विघ्न है। अतः भजनमें कभी संतोष मत करो। भजन जितना हो उतना ही थोड़ा; परमार्थ-साधन जितना हो, उतना ही थोड़ा और भगवान्के प्रति प्रेम जितना हो उतना ही थोड़ा।

याद रखो—विषयासक्त मनुष्य इससे ठीक विपरीत भोगजगत्में सदा असंतोषी रहता है, जितना जो कुछ भी पाता है, उसमें सदा ही कमीका अनुभव करता है और अधिक पाना चाहता है। उसके लिये जो कुछ करता है, उससे अधिक—और भी अधिक करना चाहता है। इसी असंतोष-वृत्तिको लेकर वह अपना कार्यक्षेत्र बढ़ाता रहता है, परिणाममें अपने-ही-आप अपनेको सब ओरसे जकड़कर बुरी तरह फँस जाता है तथा रात-दिन चिन्ता, भय, विषादसे घिरा रहता है। कभी किसी भी अवस्थामें वह शान्ति नहीं पाता, परंतु परमार्थ-साधन या भजनमें सदा संतोष रखता है। प्रथम तो, उसकी आवश्यकता ही नहीं समझता; जहाँ कुछ करता भी है तो वह बहुत ही थोड़ा, नियमित, अल्पकालके लिये ही और मान लेता है कि मैं बहुत कर रहा हूँ। इसीसे परमार्थ-साधन या भजन बनता नहीं और इसीसे सच्चे शान्ति-सुखकी प्राप्ति होती नहीं।

याद रखो—दिनभरके चौबीस घंटेमें भी कुछ मिनट यदि कोई भजनमें लगाता है और तेईस घंटेसे भी अधिक भोग-सेवन तथा भोग-साधनमें लगाता है तो उसका मन सहज ही भोगोंमें रहता है, भगवान्में नहीं लग पाता। भगवान्में मनका न लगना ही मानव-जीवनकी व्यर्थता है और बहुत बड़ा प्रमाद है।

याद रखो—भोगासक्ति तथा भोगकामनासे जीवन भोगपरायण बन जाता है। भोगपरायणतासे विवेक नष्ट हो जाता है तथा विवेकभ्रष्ट मनुष्य ऐसे कर्म करने लगता है, जो उसे कभी नहीं करने चाहिये और जिनको वह खुद बुरा मानता—कहता चला आ रहा है। उन पापकर्मोंको करते-करते उनसे पहले तो घृणा-बुद्धि निकल जाती है, फिर उनमें समीचीन बुद्धि हो जाती है, उनकी आवश्यकताका अनुभव होने लगता है और तदनन्तर पापाचरणमें वह अपना गौरव मानने लगता है—अतः उसका जीवन पाप-जीवन बन जाता है और फलतः वह अनन्त पाप-राशिको लेकर मरता है। यों उसका मानव-जीवन केवल व्यर्थ ही नहीं होता, वह मानव-जीवनके परम तथा चरम लक्ष्य भगवत्प्राप्तिसे ही वंचित नहीं रहता, वह पापके परिणामस्वरूप जन्म-जन्ममें कूकर-शूकरादि, पिशाच-राक्षसादि तथा कृमि-कीटादि आसुरी योनियोंमें जाने तथा भीषण नरक-यन्त्रणाएँ भोगनेको बाध्य होता है। अतः उसका मानव-जीवन केवल व्यर्थ ही नहीं जाता, घोर अनर्थ उत्पन्न करनेवाला होता है। इसलिये भोगमें सदा ही संतोष रखो—जो कुछ भी प्राप्त हो जाय, उसीमें संतुष्ट रहो; किन्तु भजनमें—परमार्थ-साधनोंमें कभी संतोष मत करो। उसको सदा बढ़ाते ही जाओ।

याद रखो—भगवद्‌भजन ही असली धन है, वही परम सम्पत्ति है। भजन न होना ही घोर दारिद्र्य तथा महान् विपत्ति है। भजनमें ही परम बुद्धिमत्ता एवं सौभाग्य है, भजन न होना ही महान् मूढ़ता एवं दारुण दुर्भाग्य है। भजन ही पुण्य है तथा भजन न होना ही भयंकर पाप है। अतएव दिन-रात भजन करो। मनसे भगवान्‌का चिन्तन, वाणीसे भगवान्‌के नाम-गुणका गान तथा शरीरसे होनेवाले प्रत्येक कल्याणमय कार्यके द्वारा भगवान्‌का सेवन-पूजन करो। यों दिन-रात भगवद्‌भजनमें लगे रहकर जीवनको भजनमय बना दो। तभी मानव-जीवन मानव-जीवन है और तभी उसकी सार्थकता है।

मनुष्य कर्मयोनि

याद रखो—मनुष्य कर्मयोनि है। कर्म करना उसका स्वभाव है। अतः वह बिना कर्म किये रह ही नहीं सकता। सुव्यवस्थित शुभकर्म नहीं करेगा तो अव्यवस्थित अशुभकर्म करेगा, आलस्य तथा प्रमादयुक्त निकम्मे कर्म करेगा। जिनका परिणाम उसके लिये अत्यन्त हानिप्रद एवं दुःखजनक होगा। इसलिये उसे सदा-सर्वदा शुभकर्ममें लगे रहना चाहिये।

याद रखो—जिम्मेवारीके कर्मका भार न रहनेसे ही मनुष्य प्रमाद करता है। इसलिये तुम अपनेको जिम्मेवारीके साथ कर्ममें लगाये रखो, जिससे प्रमादकी बात सोचने-करनेके लिये अवकाश ही न मिले। 'करनेयोग्य' कर्मका न करना और 'न करनेयोग्य' कर्म करना—यही प्रमाद है। मनुष्य जब प्रमादमें फँस जाता है, तब उसका सर्वथा पतन होते देर नहीं लगती। प्रमाद मृत्युसे भी बढ़कर है, अतएव प्रमादसे सदा बचो।

याद रखो—जबतक तुम जिम्मेवारीके साथ अपना सारा समय कर्तव्य (करनेयोग्य) शुभकर्ममें नहीं लगाये रखोगे—तबतक प्रमाद होनेकी सम्भावना रहेगी ही। शुभकर्म वही है, जिससे तुम्हारा अन्तःकरण पवित्र हो, मनके भाव उन्नत तथा विशुद्ध हों, परिणाममें अपना तथा दूसरोंका हित होता हो, चित्तमें शान्ति तथा सुखकी वृद्धि होती हो एवं सुव्यवस्थापूर्वक सहजभावसे सत्कर्ममें उत्साहयुक्त प्रवृत्ति बनी रहे।

याद रखो—शुभकर्ममें लगे रहनेका यह अर्थ नहीं है कि बाहरी कर्मोंमें इतना अधिक फँसा रहना पड़े, जिससे विचार करने, कर्तव्याकर्तव्य सोचने, शास्त्र तथा सत्पुरुषोंसे कर्मके लिये परामर्श करने, सदाचारकी रक्षा एवं उन्नति करने, भगवत्स्मरण तथा नियमित उपासना-आराधना करने और घरके लोगोंके साथ यथोचित व्यवहार-बर्ताव तथा उनके

प्रति कर्तव्यपालन करनेके लिये ही अवकाश न मिले। ऐसा कर्मबहुल जीवन मशीनकी तरह जड़वत् बन जाता है और आखिर उसे प्रमादग्रस्त होकर पतित होना पड़ता है।

याद रखो—कर्मका अर्थ है वे सारे सुकर्म—सत्कर्म जो इन्द्रियोंके द्वारा, मन-बुद्धिके द्वारा होते हैं तथा जिनसे सर्वांगीण योगक्षेमकी प्राप्ति एवं मानव-जीवनकी सफलता प्राप्त होती है। अतः जब जहाँ जो कर्म करना आवश्यक हो, वही कर्म करना चाहिये। एक कर्ममें लगे रहना और दूसरे सब कर्तव्यकर्मोंके प्रति दायित्वहीन होकर उनकी अवहेलना करना उचित नहीं है। एकांगी कर्म सुकर्म नहीं रह पाता। हाँ, अवश्य ही मानवके प्रत्येक कर्मका लक्ष्य होना चाहिये—भगवत्प्राप्ति या भगवत्प्रेमकी प्राप्ति—जिसके लिये वह मनुष्य बना है और उसके प्रत्येक कर्ममें प्रेरक होनी चाहिये भगवत्प्राप्ति या भगवत्प्रेम प्राप्त करनेकी सदिच्छा।

याद रखो—मानव-जीवनका लक्ष्य भगवान् हैं, भोग नहीं। भोगकी उपेक्षा नहीं है, पर उसे भगवत्प्राप्तिके लिये सहायकरूपमें बनाकर स्वीकार करना है, भगवान्की जगह लक्ष्य बनाकर कदापि नहीं। जीवनका लक्ष्य भगवान् होगा तो कर्म स्वयं सत्कर्म बन जायँगे—दैवी सम्पत्ति जीवनका स्वभाव बन जायगी और यदि लक्ष्य भोग होगा तो सत्कर्म भी दुष्कर्म बनने लगेंगे तथा आसुरी सम्पत्ति जीवनका स्वभाव बन जायगा। दैवी सम्पत्तिका फल है सुखशान्तिपूर्वक निष्पाप जीवननिर्वाह तथा तमाम बन्धनोंसे मुक्ति और आसुरी सम्पत्तिका फल है दुःख-अशान्ति-भय-विषादयुक्त जीवन और परिणाममें बन्धन तथा नरक-यन्त्रणाकी प्राप्ति। इसलिये भगवान्को ही जीवनका एकमात्र लक्ष्य बनाकर सदा सत्कर्ममें ही लगे रहो!

भगवान्‌के स्वरूपभूत गुण

याद रखो—भगवान् नित्य, सत्य हैं, आनन्दमय हैं, सर्वशक्तिमान् हैं, सर्वज्ञ हैं, सर्वेश्वर हैं और सुहृद् हैं। ये सब चीजें उनमें गुणरूपसे पृथक् नहीं हैं, स्वरूपभूत हैं, स्वभावरूप हैं। अतएव इन सब स्वरूपभूत गुणोंको धारण किये ही भगवान् जीवमात्रके प्रति अहैतुक सौहार्द रखते हैं; क्योंकि सुहृद् रहना उनका स्वभाव है। अतएव उनकी अहैतुकी कृपा नित्य-निरन्तर अनन्तरूपसे तुमपर बरस रही है।

याद रखो—उन सर्वेश्वरके नियन्त्रणमें ही उन्हींकी शक्तिसे जीव-मात्रके लिये विधानकी रचना होती है। उन सुहृद्‌का कोई भी विधान ऐसा नहीं हो सकता, जिससे परिणाममें हमारा तनिक-सा भी अहित—अमंगल होनेकी सम्भावना हो। न उनसे कभी भ्रम-प्रमाद होता है, न उनकी शक्तिमें ही कभी कोई कमी आती है, जिसके कारण विधानके निर्णयमें या उसके द्वारा मंगलकी सिद्धिमें कोई भ्रान्ति या त्रुटि आ सकती हो।

याद रखो—परम सुहृद् अहैतुक कृपा-स्वभाव भगवान्‌के मंगल-विधानमें तुम्हें कहीं कभी जो प्रतिकूलताकी प्रतीति होती है और तुम दु:खी हो जाते हो, इसमें तुम्हारा अज्ञान तुम्हारी भ्रान्त धारणा और तुम्हारी अपना मंगल-हित सोचनेवाली बुद्धिकी विपरीतता ही प्रधान कारण है। उनकी विधान-रचना एवं उसके अनुसार उसका प्रत्येक फल वस्तुत: तुम्हारे परम हितके लिये ही है; क्योंकि वह उन्हींके द्वारा तुम्हें प्राप्त हो रहा है जो नित्य सत्य आनन्दमय सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ होनेके साथ ही तुम्हारे स्वभाव-सुहृद् हैं।

याद रखो—तुम्हारे विश्वासकी कमीसे ही तुम उनके मंगल-विधानपर संदेह करके सदा दु:खी रहते हो और उसके विरुद्ध अपने मनका विधान बनानेके लिये चिन्ता, संकल्प और प्रयत्न करते हो, जिससे परिणाममें तुम्हें उलटे निराशा, अशान्ति तथा दु:ख ही मिलते हैं, शान्ति-सुख तो कभी दिखायी ही नहीं देते।

याद रखो—तुम यदि सर्वशक्तिमान् भगवान्के इस स्वभाव-सुलभ सौहार्दपर विश्वास कर लो तो तुरंत तुम्हारे मनको आश्वासन तथा शान्ति मिल जायगी, जो सारे दुःखोंका सदाके लिये नाश करके तुम्हें सहज सुखी बना देगी। फिर, तुम्हें उन प्रियतम प्रभुके द्वारा रचित प्रत्येक विधानमें, उनके द्वारा प्रेषित प्रत्येक परिस्थितिमें उनका परम मंगलमय मधुर मनोहर स्पर्श प्राप्त होता रहेगा। प्रत्येक परिस्थितिमें तुम विक्षोभरहित आनन्दपूर्ण नेत्रोंसे इनकी परम मंगलमय मधुर मनोहर मुसकानका साक्षात्कार करोगे। प्रत्येक परिस्थितिमें सहज ही तुम्हारा परम कल्याण चाहनेवाले उनके परम मंगलमय मधुर मनोहर सच्चिदानन्दमय मनके दर्शन होंगे और तुम दिव्य आनन्दसागरमें सदाके लिये निमग्न हो जाओगे।

याद रखो—विश्वास होते ही यह सब होने लगेगा। अशान्ति, दुःखका सारा अन्धकार उसी प्रकार भागने लगेगा, जिस प्रकार सूर्योदयसे पूर्व ही समस्त अन्धकार मरनेकी तैयारी करने लगता है। अतः तुम तो बस, नित्य-निरन्तर उनके मधुर मनोहर सुहृद्-स्वभावकी ओर देखते रहो, उसीका चिन्तन-मनन करते रहो तथा मनमें बराबर यही निश्चय करते रहो कि वे मंगलमय सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ प्रभु मेरे अकारण सुहृद् हैं। अतएव कोई भी पाप-ताप, भ्रान्ति-भय, अशान्ति-दुःख मेरे पास कभी आ ही नहीं सकते! आ ही नहीं सकते।

प्रेम त्यागमूलक है

याद रखो—बन्धन करनेवाली है ममता, प्रेम नहीं। बन्धन करनेवाला है भोग, त्याग नहीं। अतः ममता कहीं मत करो, किसी भी प्राणी-पदार्थ-परिस्थितिमें 'मेरापन' मत रखो। भोगवासनाको लेकर किसी भी प्राणी-पदार्थ-परिस्थितिसे सम्पर्क मत रखो, सम्बन्ध मत जोड़ो। परंतु प्रेम करो सबके साथ, त्याग करो सबके लिये उनके सुखार्थ, उनके हितार्थ और उनके अधिकार-रक्षणार्थ। वस्तुतः प्रेम है ही त्यागमूलक, भोगमूलक कदापि नहीं।

याद रखो—तुम कहते हो 'अमुक मुझसे प्रेम नहीं करता—अर्थात् मेरे हित-सुखके लिये वह त्याग नहीं करता' पर तुम अपनी ओर देखो—तुम सचमुच उससे प्रेम करते हो क्या? तुम सचमुच उसके सुख-हितके लिये त्याग करते हो क्या? यदि नहीं करते तो उससे कैसे चाहते हो और क्यों उसपर दोषारोपण करते हो? तुम प्रेम करो, अपनी ओरसे उसके हित सुखके लिये त्याग करो। फिर देखोगे, वह तुमसे कितना प्रेम करता है।

याद रखो—सर्वत्र भगवान् भरे हैं—सब कुछ भगवान्से परिपूर्ण है। अतः सभी तुम्हारे पूज्य हैं, सभी आदरणीय हैं, सभी सेव्य हैं और सभी अपने हैं। तुम यदि सदा 'सबके रूपमें भगवान् हैं' यह विश्वास करोगे और यदि तुम्हारा विश्वास और दृढ़ हो जायगा तो तुम्हें सबमें निश्चय ही भगवान् दीखने लगेंगे। तुम ऐसा करके देखो। परंतु जबतक ऐसा न हो, तबतक आप्तवाक्योंपर विश्वास करके सबमें भगवान्की भावना करो और सबके साथ नम्रता, विनय तथा सम्मानयुक्त व्यवहार करो; सबको सुख पहुँचानेका मनोरथ और प्रयास करो। बड़ी सावधानीसे यह ध्यान रखो—तुम्हारे द्वारा जान-बूझकर किसीका भी जरा-सा भी अहित न हो जाय, किसीके भी हित और न्याय अधिकारपर तुम्हारे द्वारा जरा-सा भी आघात न पहुँच जाय।

याद रखो—भगवान् तो सभीमें हैं, सर्वदा हैं और सर्वत्र हैं। परंतु जहाँ-जहाँ दैन्य, दुःख, अभाव, पीड़ा, व्याधि, मार्गच्युति, भय, विषाद और असहायावस्था है, वहाँ-वहाँ मानो भगवान् उस-उस रूपमें तथा उस-उस परिस्थितिमें तुम्हें दी हुई अपनी ही वस्तुओंके द्वारा तुमसे यथायोग्य अपनी सेवा चाह रहे हैं। तुमसे अपनी ही वह वस्तु अपने ही लिये—तुम्हें दाता एवं दयालुपनका गौरवदान देते हुए, माँग रहे हैं। अतएव इस अवस्थामें मुक्तहस्त होकर उनकी यथायोग्य सेवा करो और भगवान्‌का स्नेहपूर्ण आशीर्वाद प्राप्त करो।

याद रखो—तुम्हारे पास जो कुछ है, सब भगवान्‌का है और वह भी है भगवान्‌की सेवा-पूजाके लिये ही! तुम्हारा अधिकार तो केवल भगवान्‌के भोग लगानेके बाद बचा हुआ प्रसाद पानेका ही है और वास्तवमें यही परम सौभाग्य है। उनकी वस्तुको सदा उन्हींकी मानते हुए उसके द्वारा उनकी सेवा करो और बचा हुआ पुण्यमय, अमृतमय प्रसाद पाकर कृतार्थ होते रहो। उस वस्तुके सम्बन्धमें तो तुम्हारे दो ही कर्तव्य हैं—उसका संरक्षण-संवर्धन करो और सदा-सर्वदा प्रसन्नहृदयसे उसे उनकी सेवामें लगा-लगाकर परमानन्द लाभ करते रहो।

याद रखो—यह आवश्यक नहीं है कि उनकी सेवा अमुक वस्तुसे ही हो सकती है। तुम्हारे पास जो कुछ भी मन, तन, बुद्धि, धन, विद्या, शक्ति आदि है उसीके द्वारा उनकी सेवा करो। वे जिस-जिस रूपमें जो-जो चाहते हैं, उस-उस चाहके अनुरूप तुम्हारे पास जो-जो वस्तुएँ हैं, केवल उन्हींके द्वारा उनकी सेवा करो। पर असल बात तो यह है कि उन वस्तुओंको मानो उन्हींकी और उनका सदुपयोग करो उनकी सेवामें ही। यही तुम्हारे सारे बन्धनोंको तुरंत काटनेवाला और भगवान्‌को तुम्हारे साथ नित्य बँधे रहनेके लिये बाध्य करनेवाला 'प्रेम' है।

जीवन भगवान्‌की क्रीड़ा

याद रखो—तुम्हारा सारा जीवन भगवान्‌की क्रीड़ा है और तुम्हारा अहंकार तथा तुम भगवान्‌की क्रीड़ास्थली हो। तुम्हारे सुख-दु:ख, लाभ-हानि, उत्सव-अवसाद, स्वस्थता-रुग्णता, मान-अपमान, स्तुति-निन्दा, निज-पर, प्रिय-अप्रिय, शुभ-अशुभ, जीवन-मरण—सभी भगवान्‌की क्रीड़ा है, उनकी लीला है। तुम जो क्रीड़ाक्षेत्र हो—अपनेको कर्ता-भोक्ता मानकर व्यर्थ ही भगवान्‌की लीला तथा भगवान्‌के प्राणी-पदार्थोंमें अहंता-ममता, कामना-आसक्ति करके अपने-आप ही अशान्ति, क्षोभ, दु:ख, पाप आदिको बुलाकर उनके अधीन हो जाते हो, इस मोहको—प्रमादको छोड़कर अपनी यथार्थ स्वरूपस्थितिको पहचानो और इन सारे अज्ञानजनित स्वरचित मिथ्या बन्धनोंको तोड़कर भगवान्‌को स्वतन्त्ररूपसे निर्बाध उनकी मनमानी लीला करने दो—खेल खेलने दो।

याद रखो—तुम उनके लीलाक्षेत्र ही हो, पर यदि सर्वथा अपनेको उनकी लीलाका क्षेत्र न देख सको तो कम-से-कम यही करो कि तुम्हारे जिम्मेका जो खेल है, उसे उन एकमात्र स्वामी भगवान्‌की प्रीतिके लिये उनके लीला-विधानके अनुसार खेलते रहो और उनकी शेष सारी लीलाओंको—सब खेलोंको चाहे वे शृंगार-रसके हों या भयानक-रसके, करुण-रसके हों या रौद्र-रसके, हास्यरसके हों या वीभत्स-रसके—किसी भी रसके कैसे भी हों, देखते रहो और उन अजब खिलाड़ी लीलामय भगवान्‌की लीला-चातुरीपर नित्य मुग्ध होते रहो।

याद रखो—वस्तुत: इस समस्त अनन्त विश्व-ब्रह्माण्डमें दो ही चीजें हैं—जो है वह 'भगवान्' है और जो हो रहा है—वह 'भगवान्‌की लीला' है। लीलामय भगवान् और भगवान्‌की लीलामें स्वरूपत: कोई भेद नहीं है। वस्तुत: लीला, लीला करनेवाले भगवान् और लीलाके

साथी-संगी तथा उपकरणादि सब भगवान् ही हैं। भगवान् सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र सर्वलोक-महेश्वर हैं और वे नित्य नयी लीला करते हैं तथापि उन सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान्‌की सारी लीलाएँ पूर्वज्ञात, पूर्वरचित, सुव्यवस्थित, निर्भ्रान्त एवं परमानन्दमयी हैं। भगवान्‌की इस लीलामें नित्य-निरन्तर केवल सीमारहित आनन्द-ही-आनन्द है; क्योंकि यह लीला उन अनन्त परमानन्दस्वरूप भगवान्‌की ही अभिव्यक्ति है। वे लीलामय ही लीलाके रूपमें प्रकट हैं।

याद रखो—भगवान्‌की इस लीलामें तुम्हें यदि कहीं दुःख, पीड़ा, निराशा, विषाद, भय, शोक आदि काली-कराली छायामूर्तियाँ दीखती हैं या उनकी कल्पना होती है तो इसका अभिप्राय यही है कि तुमने अभीतक इस बातको ठीक-ठीक समझा-देखा नहीं है कि इस अनन्त विश्वमें केवल परमानन्दमय भगवान् हैं तथा उनकी आनन्दमयी लीला ही अनवरत चल रही है। सृजन और संहार दोनों उस लीलाकी ही दो दिशाएँ हैं। इस रहस्यको समझ-देख लेनेपर तो सदा सर्वथा सर्वत्र आनन्द-ही-आनन्दका अनुभव होता है।

याद रखो—भगवान् ही इन सारी लीलाओंके निमित्त उपादान-कारण हैं, वे ही करते हैं, वे ही देखते हैं और यदि कहीं भोगनेकी कल्पना हो तो अपनेमें अपनेको विविध विचित्र खिलौनोंके रूपमें, खेलके रूपमें आप ही भोगते हैं। तुम भी एक खिलौने, खेलकी भूमि या खेल ही हो। यह समझो और सदाके लिये आनन्दमय बन जाओ।

विवेकका सदुपयोग

याद रखो—तुम मनुष्य हो, भगवान्‌ने तुमको भविष्यके अच्छे-बुरे सोचनेकी बुद्धि दी है, विवेक दिया है। भगवान्‌के दिये हुए उस विवेकके द्वारा अच्छे-बुरेका यथार्थ निर्णय करके अच्छेका ग्रहण और बुरेका त्याग करो। तभी तुम्हारे विवेकका सदुपयोग तथा संरक्षण होगा और विवेकके सदुपयोग तथा संरक्षणसे ही तुम्हारी मानवता सिद्ध होगी।

याद रखो—विवेकसे रहित मनुष्य काम-क्रोध-लोभके वेगसे ग्रस्त होकर पशु या पिशाच बन जाता है। कहीं-कहीं तो वह पशु तथा पिशाचके स्तरसे भी आगे बढ़कर इतना मूढ़ और इतना भयंकर बन जाता है कि महान् राक्षस भी उसकी समता नहीं कर पाता, वह अपने तथा जगत्‌के अमंगलके कारण घोर पापका समुद्र बन जाता है।

याद रखो—मनुष्यके पास जो बुद्धि है, वह जब विपरीत निर्णय देनेवाली तथा विपरीत मार्गपर चलानेवाली बन जाती है, तो फिर उस मनुष्यके समस्त साधन उसके लिये भयानक पापके साधन बन जाते हैं। जिन ज्ञान-विज्ञानके आविष्कारोंसे, जिन भौतिक तथा दैविक सामग्रियोंसे वह समस्त जगत्‌की सेवा करके सबको सुख पहुँचाकर परिणाममें अपना परम कल्याण कर सकता है, अविवेकके कारण काम-क्रोध-लोभपरायण मनुष्य उन्हीं ज्ञान-विज्ञानके साधनोंसे, उन्हीं भौतिक तथा दैविक सामग्रियोंसे अपने मिथ्या लाभकी कल्पनासे अहंकारमें भरकर समस्त जगत्‌के विनाशकी बात सोचता है और फलतः स्वयं जीवनभर अशान्ति तथा चिन्ताकी आगमें जलता हुआ बुरी तरह मरता है और मरणोत्तर भीषण नरक-यन्त्रणा भोगने एवं बार-बार आसुरी योनियोंमें जन्म लेनेको बाध्य होता है। यह सब विवेक नष्ट होनेका ही कुपरिणाम है।

याद रखो—काम, क्रोध और लोभ—ये तीन नरकके दरवाजे हैं और आत्माका पतन करनेवाले हैं। विवेकमें शिथिलता आते ही इनकी प्रबलता बढ़ जाती है। फिर ये रहे-सहे विवेकको भी नष्ट कर देते हैं। तब मनुष्य बुद्धिका दुरुपयोग करके अपने सहज प्राप्त साधनोंके द्वारा अन्य सबके विनाशकी बात सोचता है और योजना बनाता है। हिंसावृत्तिवाले हिंसक पशु सिंह, बाघ, साँप आदि तो सामने आये हुए जीवकी ही हिंसा करते हैं, वे योजनापूर्वक हिंसा नहीं करते, वे योजनापूर्वक विषय-संग्रहका प्रयास नहीं करते। पर मनुष्य योजना बनाना जानता है और उसके पास योजनाके अनुसार कार्य करनेके साधन भी हैं; ऐसा शक्तिमान् मनुष्य जब अपनी बुद्धि तथा प्राप्त साधनोंको अमंगलमें मंगल मानकर अमंगल-साधनमें ही लगा देता है, तब वह पशु तथा पिशाचसे भी कितना अधिक आगे बढ़ जाता है, अपने तथा जगत्के लिये कितना अहितकर—कितना शत्रु होता है। इसपर गहराईसे विचार करो।

याद रखो—मानव-जीवन प्रभुकी प्राप्तिके लिये है, भोगोंके लिये नहीं। पाप-साधन करके अपना अमंगल करनेके लिये तो कदापि नहीं। इस बातको सोच-समझकर विवेकका संरक्षण और सदुपयोग करो तथा मानव-जन्मके असली लाभ परमात्मा या भगवत्प्रेमको प्राप्त करके जीवनको सफल बना लो।

व्यक्तिके सुधारसे ही विश्वका सुधार

याद रखो—व्यक्तियोंके समूहका नाम समाज है, समाजके समूहोंका नाम राष्ट्र और राष्ट्रोंके समूहोंका नाम विश्व है। यदि प्रत्येक व्यक्ति विशुद्धचरित्र, सात्त्विक-गुणप्रधान, प्रेमपूर्ण-हृदय, परार्थ-त्यागी और संयमी हो जाय तो सारा विश्व स्वयमेव ही ऐसा बन जाय। पर मनुष्य दूसरेको देखता और उसका सुधार करना चाहता है। वह न तो अपनी ओर देखता है और न अपने दोषोंको दूर करके गुणोंको ग्रहण ही करना चाहता है। फलस्वरूप समाज या विश्वमें दोष बढ़ते रहते हैं।

याद रखो—जबतक व्यक्तिका सुधार नहीं होगा, तबतक समाज बिगड़ा ही रहेगा। न तो कोई व्यवस्था उसे सुधार सकेगी, न कोई कानून ही। चोरी, जारी, हिंसा अपराध हैं—बुरी चीजें हैं। मनुष्य कहता है किसी समाजमें यह न हो। वह भाषण देता है, लिखता है, नियम बनाता—कानून बनाता है, पर स्वयं न इन्हें बुरा समझता है, न इनसे घृणा करता है और न इनका त्याग ही करना चाहता है। तब इनका समाजमें अभाव कैसे होगा, कैसे समाज सुधरेगा।

याद रखो—जबतक मनुष्य बुरेको हृदयसे ठीक बुरा नहीं समझेगा, बुरेसे घृणा नहीं करेगा; तबतक वह कहे कुछ भी और चाहे वह सबके सामने अपराध न भी करे, पर उसके मनसे तो अपराध होते ही रहेंगे और चुपके-चुपके वह बाहर भी करता रहेगा। कानून बनाने तथा मानने-मनवानेवाले भी सब व्यक्ति ही हैं, अतः कानून पुस्तकोंमें छपा रहेगा और अपराध बनते रहेंगे।

याद रखो—जब व्यक्ति अपराधको मनसे अपराध मानेगा, पापको मनसे पाप समझेगा, तब वह मनमें भी जरा-सा पाप-संकल्प उदय होनेपर दुःखी होगा। अकेलेमें भी जरा-सा पाप करते डरेगा। फिर, समाजसे अपने-आप ही अपराध—पाप निर्मूल हो जायँगे। समाज सुधर जायगा—समाजोंके सुधारसे विश्वतक सुधर जायगा।

याद रखो—मनुष्यके पास प्रधान तीन चीजें हैं—बुद्धि, मन और शरीर। इनमें प्रधान बुद्धि है। बुद्धि ही मार्गका निर्णय करनेवाली तथा शरीर-रथकी संचालिका सारथि है। बुद्धि जब अधर्मको धर्म, पापको पुण्य बताने लगती है, तब वह मारी जाती है और बुद्धिका नाश होते ही मनुष्यका सब प्रकारसे पतन हो जाता है। बुद्धि शुद्ध रहेगी, तब मनमें शुद्ध संकल्पोंका उदय होगा तथा शरीरके द्वारा शुभ क्रियाएँ होंगी। तब व्यक्ति अपने-आप ही ठीक हो जायगा। व्यक्तिका सुधार ही विश्वका सुधार है।

याद रखो—आज जो दुनियामें कलहकी आग धधक रही है, छोटी-सी झोपड़ीसे लेकर बड़े-बड़े राष्ट्रोंमें विभिन्न निमित्तोंसे जो अवांछनीय घटनाएँ घट रही हैं तथा स्थान-स्थानसे पद-पदपर त्याग, प्रेम, संयम एवं सद्भावके अभावसे जो बुराइयाँ पैदा हो रही हैं, उनमें व्यक्तिका बुद्धिनाश ही प्रधान कारण है। व्यक्तिका अधर्मविचार तथा अधर्माचरण ही प्रधान कारण है। यह किसी भी कानूनसे नहीं दूर हो सकता। इसके लिये व्यक्तिकी बुद्धि शुद्ध होनी चाहिये और प्रत्येक व्यक्तिको अपने सुधारमें लगना चाहिये।

याद रखो—तुम्हारा सुधार तुम्हारे अपने चाहने तथा करनेसे ही होगा। इसलिये अपना सुधार चाहो, अपने दोषोंको निर्मूल करनेका प्रयत्न करो, अपनेको संस्कृत करो, अपनेको शुभचरित्र, सच्चरित्र, सात्त्विक-चरित्र, उच्च-चरित्रवाला सुसंस्कृत पुरुष बनाओ और अपना शुभ निर्माण करो—इसके लिये लग जाओ श्रद्धा-विश्वासपूर्वक पूरे मनसे, पूरी शक्ति लगाकर। दूसरेकी ओर न देखो। भगवान् तुम्हारे सहायक होंगे। उनका बल तुम्हारे साथ होगा। उनसे प्रार्थना करो—उनकी कृपाशक्तिपर विश्वास करो। सारे विघ्नोंका विनाश करके तुम्हें आगे बढ़ाकर ले जायगी शीघ्र ही—उनकी कृपा। फिर समाजका, राष्ट्रका, विश्वका सुधार स्वयमेव ही हो जायगा।

भगवान् शिवका स्वरूप

याद रखो—भगवान् शिव निजात्मस्वरूप, निरंजन, निराभास, निर्गुण, निर्विकार, निरामय, निरीह, नित्यसत्य, सर्वातीत, शब्दातीत, प्रकृतिपर, परात्पर, परतम, परमानन्दमय, परब्रह्म हैं। वे सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र, सर्वोपरि, सर्वाश्रय, सर्वव्यापी, सर्वरूप, सर्वज्ञ, सर्वलोकमहेश्वर, सर्वनियन्ता, सर्वगत, सर्वशक्तिमान् लीलाविहारी हैं।

याद रखो—भगवान् शिवजी ही वेदरूप, वेदवेद्य, वेदज्ञान हैं, वे प्रणवरूप हैं। 'प्रणव' उनका वाच्य है, वे वाचक हैं। उन पंचानन प्रभुके उत्तरकी ओरके मुखसे अकार, पश्चिमके मुखसे उकार, दक्षिणके मुखसे मकार, पूर्वके मुखसे विन्दु और मध्यके मुखसे नाद उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार पाँचों मुखोंसे निर्गत इन्हीं सबके समग्ररूपमें 'ॐ' एकाक्षर बना है। समस्त नाम-रूपात्मक जगत्, स्त्री-पुरुषादि समस्त प्राणिसमुदाय तथा चारों वेद—सभी इस 'प्रणव' (ॐ)-से ही व्याप्त हैं। यह ॐ शिवशक्तिका बोधक है।

याद रखो—सृष्टि, स्थिति, संहार, लय और अनुग्रह—इन पाँच प्रकारकी क्रियाओंके रूपमें भगवान् शिवकी लीला निरन्तर होती रहती है। इनमें चिद्रूपका सम्बन्ध 'अनुग्रह' से आनन्दरूपका 'लय' से और इच्छा-रूप, ज्ञानरूप तथा क्रियारूपका सम्बन्ध 'सृष्टि', 'स्थित' और 'संहार' से है, इन्हीं पाँच रूपोंके प्रकाशक भगवान् शिवके—ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात नामक पाँच मुख हैं। इनमें ईशान तथा तत्पुरुषसे तुर्यातीत तथा तुर्यदशाकी एवं सद्योजात, वामदेव तथा अघोरसे जाग्रत्, स्वप्न और सुषुप्तिकी व्याप्ति है। इसी क्रमसे पंचमहाभूतोंकी व्याप्ति इनसे मानी जाती है।

याद रखो—भगवान् शिवकी पंच मूर्तियोंमें प्रथम मूर्ति क्रीड़ा करती है, दूसरी तपस्या करती है, तीसरी लोकसंहार करती है, चौथी प्रजासृष्टि करती है और पाँचवीं सद्वस्तुयुक्त समस्त संसारको आच्छन्न

करके रखती है। ईशानमूर्ति सबकी प्रभु, सबमें वर्तमान सृष्टि-प्रलय-रक्षा करनेवाली है।

याद रखो—भगवान् शिवकी ईशान नामक प्रथम मूर्ति साक्षात् प्रकृति-भोक्ता क्षेत्रज्ञ पुरुषमें अधिष्ठित है, तत्पुरुष नामक द्वितीय मूर्ति सत्त्वादि गुणोंके आश्रय भोग्य प्रकृतिमें अधिष्ठित है, तृतीय अघोर नामकी मूर्ति धर्म आदि अष्टांगयुक्त बुद्धिमें अधिष्ठित है, चतुर्थ वामदेव-मूर्ति अहंकारमें अधिष्ठित है और पंचम सद्योजात-मूर्ति मनमें अधिष्ठित है।

याद रखो—भगवान् शिवकी शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, ईशान, महादेव तथा पशुपति नामकी अष्टमूर्तियाँ क्रमशः पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्र और क्षेत्रज्ञ (यजमान)-में अधिष्ठित हैं। इन्हीं आठोंके रूपमें उनकी पूजा करनी चाहिये।

याद रखो—भगवान् परम शिवके तीन व्यूह हैं—और इकतीस प्रकार हैं—तीन व्यूहोंके नाम शिव, सदाशिव और महेश्वर हैं। शिव एकरूप है, सदाशिव पंच रूप और महेश्वर पंचविंशति रूप।

याद रखो—भगवान् शिवके दूसरे प्रकारसे चार व्यूह हैं, ब्रह्मा, काल, रुद्र और विष्णु। भगवान् शिव इन सबके आधार एवं शक्तिके भी आधार तथा प्रभव-स्थान हैं।

याद रखो—परात्पर परतम भगवान् शिव त्रिदेवगत रुद्र नहीं हैं। भगवान् शिवकी इच्छासे प्रकट रजोगुणरूप धारण करनेवाले ब्रह्मा, सत्त्वगुणरूप विष्णु एवं तमोगुणरूप रुद्र हैं, जो सृजन, रक्षण तथा संहारका कार्य करते हैं। ये तीनों वस्तुतः शिवकी ही अभिव्यक्ति हैं, इसलिये शिवके पृथक् भी नहीं हैं। परात्पर परतम सदाशिव, महाविष्णु आदि स्वरूपतः ही एक तत्त्व हैं। इनमें भेद-बुद्धि या ऊँच-नीचकी भावना करके राग-द्वेषयुक्त स्तुति-निन्दा करना पाप है तथा पतनका प्रत्यक्ष कारण है।

याद रखो—भगवान् शिव या रुद्र अनादिकालीन वैदिक देवता

हैं; और इनकी लिंग-पूजा भी सनातन है। न तो ये आधुनिक देव हैं, न लिंग-पूजा ही आधुनिक या अनार्य-पूजा है। शिवलिंग चिन्मय है, स्थूल अंगविशेष नहीं। चिन्मय आदिपुरुषका स्वरूप ही लिंग है। जिनसे चराचर विश्वकी उत्पत्ति हुई है, वे ही सबके लिंग या कारणस्वरूप हैं। लिंग पीठ अर्थात् प्रकृति पार्वती हैं और लिंग चिन्मय परब्रह्म पुरुष हैं। पीठ अम्बामय तथा शिवलिंग चिन्मय पुरुषमय है।

याद रखो—लिंगका अर्थ है चिह्न। जैसे सींग, थूहा, पूँछ, गलकम्बल—ये गौ-जातिके लिंग हैं—

'विषण्णी ककुद्मान् प्रान्ते बालधिः सास्नावानिति गोत्वे दष्टं लिङ्गम्।'

लिंग कहते हैं—पहचान करनेवाले चिह्नको—**'आकृति-र्जातिलिङ्गाख्या।'** मूँछ पुरुषका लिंग है—मूँछवाला पुरुष होता है, नारी नहीं; इसी प्रकार भगवान् शिवका परिचायक चिह्न है लिंग। शिवपुराणमें शिवलिंगोंके जो रूप बताये हैं, उन्हें जानकर कोई यह नहीं कह सकता—यह मनुष्यका शिश्न है। वहाँ बताया है सबसे पहला लिंग ज्योतिस्तम्भरूप है; जो प्रणव (ॐ) है। यह सूक्ष्म लिंग प्रणवरूप तथा निष्कल है। स्थूल लिंग सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड है।

याद रखो—शिवलिंगकी आकृति ब्रह्माण्डकी ही आकृति है, यह मानो ब्रह्माण्डका एक मानचित्र है। चराचरात्मक सम्पूर्ण जगत् इस ब्रह्माण्डरूप शिवलिंगमें है। एक शिवलिंगके पूजनसे ही सूर्य, चन्द्र, नारायण, लक्ष्मी सबकी पूजा सम्पन्न हो जाती है।

जैसे भगवान् विष्णुके अव्यक्त ईश्वररूपकी प्रतीक शालग्रामरूप पिण्डी है, वैसे ही भगवान् शिवके अव्यक्त ईश्वररूपकी प्रतिमा लिंगरूप पिण्डी है।

याद रखो—भगवान् शिव ही समस्त विद्याओंके—योग, ज्ञान, भक्ति, कर्म आदि परम कल्याणकारिणी विद्याओंके भण्डार जगद्गुरु हैं। वे केवल शिक्षा देनेवाले ही गुरु नहीं हैं, सभी विषयोंमें स्वयं

आदर्शरूप हैं। वे परम योगाचार्य—योगेश्वर हैं। उन्हींके शिष्य-प्रशिष्योंके द्वारा योगका प्रसार-प्रचार तथा संरक्षण हुआ तथा होता है।

याद रखो—भगवान् शिव पूर्णतम योगेश्वर, महान् गम्भीर ज्ञानस्वरूप होनेपर भी अपनी साधुताका परिचय करानेवाले महान् सरलहृदय हैं। वे बहुत लम्बी-चौड़ी पूजा-उपासनाकी प्रतीक्षा न करके बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं, इसीसे उनका 'आशुतोष' नाम प्रसिद्ध है और प्रसन्न होकर वे परम अलभ्य वस्तु भी सहज ही दे डालते हैं—इसीसे वे 'औढरदानी' कहलाते हैं। वे सहज कल्पतरु हैं; उनसे जो मनुष्य, जो कुछ भी चाहता है, भगवान् शिव उसे वही दे देते हैं। उनके औढरदानी या आशुतोष होनेका यह अभिप्राय नहीं है कि उनमें बुद्धि और विवेककी कमी है। वस्तुतः समस्त विवेक ज्ञान एवं बुद्धिके आधार ही भगवान् शिव हैं। वे ही जगद्‌गुरु-रूपमें समस्त ब्रह्माण्डके सम्पूर्ण देवर्षि-मुनि-मानवोंको ज्ञान-दान देते हैं। यह तो भगवान् शंकरकी एक विशेष दयालुता है कि वे सबके मनोरथ पूर्ण करनेमें सदा तत्पर रहते हैं।

याद रखो—भगवान् शिव सदा ही मंगलमूर्ति हैं, कल्याणमय हैं। उनका अशिव वेष विषय-वैराग्यका आदर्श है, न कि पागलपनका। जो लोग भगवान् शिवको नशेबाज, भँगेड़ी, गँजेड़ी, पागल या मसानमें रहनेवाले औघड़मात्र मानते हैं, वे अपनी ही सदाचार-हीनताका शिवपर आरोप करके अपने दोषोंको ढकनेके लिये भगवान् शिवका सहारा लेकर अनर्थ करते हैं। जैसे व्यभिचारप्रिय लोग भगवान् श्रीकृष्णके परम पवित्र रासका रहस्य न समझकर प्रकारान्तरसे अपनी व्यभिचार-वृत्तिका समर्थन करते हैं, वैसे ही शिवके आचरणोंके अनुकरणका ढोंग रचकर असदाचारी लोग ऐसा कहते हैं। सच्चे शिवभक्तके लिये सदाचारी होना परम आवश्यक है। जान-बूझकर अपवित्र आचरणको जीवनमें भरे रखनेवाला कोई भी शिवभक्त नहीं हो सकता।

याद रखो—त्रिगुणमय जगत् ही बन्धनरूप है, शिवके भजनसे मनुष्य गुणातीत हो जाता है—उसके तीनों गुण भस्म हो जाते हैं; इसीसे वे 'त्रिपुरारि' हैं। अभिमान, क्रोध आदि दोष ही सर्प हैं, इन सबको अपने वशमें करके भगवान् शंकरने अपना भूषण बना लिया है, इसलिये वे 'सर्पभूषण' हैं। धर्म ही वृषभ है, वे नित्य धर्मपर आरूढ़ रहते हैं, इसीसे 'वृषभवाहन' हैं। भगवान् शिवकी विभूति ही जगत्को यथार्थ विभूति प्रदान करती है, इसीसे वे 'विभूति' को सदा सारे शरीरपर लगाये रहते हैं। सम्पूर्ण चराचर भूत उन्हींके आधीन हैं, इसीसे वे 'भूतनाथ' हैं। उनका प्रत्येक अंग, आभूषण आध्यात्मिक अर्थ रखता है।

याद रखो—भगवान् शिवका नाम परम मंगलमय, कल्याणमय, सर्वदुःखनाशक, सर्वसुखविधायक, सर्वसिद्धिदाता और भोग-मोक्ष देनेवाला है। अतएव श्रद्धापूर्वक भगवान् शिवके एक नाम या पंचाक्षर '**नमः शिवाय**' मन्त्रका जप करो और सहज ही आशुतोष शंकरकी कृपा प्राप्त करके कृतार्थ हो जाओ।

भगवान् ही एकमात्र रस हैं

याद रखो—एकमात्र भगवान् ही 'रस' हैं। इसी रसका जगत्में सर्वत्र विस्तार है, पर प्रकृतिके संयोगसे मूल तत्त्वके रूपमें नित्य एक-रस रहते हुए ही सृजन-पालन-संहार-लीलाके लिये इसके नौ रस हो जाते हैं—शृंगार, हास्य, करुण, वीर, रौद्र, भयानक, बीभत्स, अद्भुत और शान्त।

याद रखो—इन्हीं नौ रसोंमें सृजन-पालन-संहारके सारे कार्य चलते रहते हैं। जो समष्टिमें है, वही व्यष्टिमें—इस दृष्टिसे प्रत्येक मानवका जीवन भी इन्हीं नौ रसोंसे ओत-प्रोत है।

याद रखो—इस विश्वमें नित्य-निरन्तर रसमय भगवान्की रसमयी लीला हो रही है। भगवान् ही नटवर नटराजके रूपमें यहाँ लीलानृत्य कर रहे हैं। इस लीलानृत्यके दो प्रधान भेद हैं—लास्य और ताण्डव। नौ रसोंमें पहले चार लास्य नृत्यके रस हैं और दूसरे चार ताण्डवके। जहाँ इन दोनों नृत्योंका समरस ग्रहण है, वहाँ शान्त-रस है। यह शान्त-रस रसमय भगवान्की ओर ले जानेवाला है।

याद रखो—शान्त-रसके दो भेद हैं—साधन-शान्त-रस और साध्य-शान्त-रस। इस साधन-शान्त-रससे ही भगवद्भक्तिके रसोंका—रतिका प्रारम्भ होता है। ये पाँच रस या रति हैं—शान्त, दास्य, सख्य, वात्सल्य और मधुर। दास्यसे लेकर मधुरतक चारों ही रसोंमें शान्त-रसकी भूमिका अत्यावश्यक और अनिवार्य है। शान्त-रसमें साधक इन्द्रियदमन, मनकी शान्ति, विषय-वैराग्य, स्व-सुखवासनाजनित विषयासक्ति तथा विषयकामनासे रहित त्यागभाव एवं भगवान्के अनुकूल सदाचार-सद्विचार-सद्भाव आदिको न्यूनाधिकरूपसे प्राप्त कर लेता है। इस साधन-शान्त-रसकी, वेदान्त-साधनके साधन-चतुष्टयकी तीसरी स्थिति—षट्सम्पत्ति (शम, दम, तितिक्षा, उपरति, श्रद्धा और समाधानरूपा छः सम्पत्ति, वैराग्य तो इनके पहले ही हो जाता है)-से तुलना की जा सकती है।

याद रखो—जबतक मनुष्य अपनी अलग किसी प्रकारके सुखकी स्थितिकी कल्पना करके उसको चाहता रहता है, तबतक वह भगवान्के 'अनन्य दासत्व' में अपनेको नियुक्त नहीं करा सकता। भक्तराज श्रीहनुमान्जीकी भाँति अपनेको भूल जानेपर ही यथार्थ 'सेवक' भावका प्रकाश होता है। जबतक सेवक एकमात्र अपने स्वामीके अनन्य सेवा-सुखके अतिरिक्त अन्य कहीं किसी प्राणी-पदार्थमें सुखकी कल्पना करता है, तबतक वह सच्चा सेवक—'दास्य-रति' वाला दास नहीं बन सकता।

याद रखो—जब दास्य-रति उत्तरोत्तर प्रगति करती हुई मधुर रतिमें परिणत हो जाती है या भगवत्कृपासे बिना ही क्रमोन्नतिके मधुर रतिका विकास हो जाता है, तब उसमें एक महान् मधुरतम दिव्य उच्छलन आता है, जो परम प्रियतम भगवान्के सुखके लिये जीवनके कण-कणको, अणु-अणुको नचा देता है। इसका परिणाम होता है—महाभाव, जिससे एक दिव्य अनिर्वचनीय—अचिन्त्य मधुरतम शान्त-रसका प्रादुर्भाव होता है, जो प्रेमी-प्रेमास्पदका भेद मिटाकर परस्पर परम और चरम एकत्व-सुखैकत्व तथा स्वरूपैकत्व रूपमें प्रकट होता है और नित्य-निरन्तर परस्पर-सुखसम्पादनमें निरत मधुरतम प्रेमानन्दमय, लीलातरंगमय होनेपर भी परम विलक्षण अपूर्व शान्त-स्वरूपमें परिणत हो जाता है। यही है—साध्य-शान्त-रस। यही प्रियतम भगवान्का दिव्य सेवालाभ है। यही भक्तका परम ज्ञान है। यही साक्षात्कार है। यही ज्ञानोत्तर कालमें प्राप्त प्रेम है और यही दिव्यातिदिव्य भगवत्सेवा-सुख है।

भगवान् एक, साधन अनेक

याद रखो—भगवान् एक हैं, परंतु उनतक पहुँचनेके मार्ग अनेक हैं। साध्य-लक्ष्य एक है, परंतु उसे प्राप्त करनेके साधन अनन्त हैं। साध्य एक होनेपर भी साधनोंमें अनेकता अनिवार्य है। जैसे काशी एक है, पर काशी पहुँचनेके पथ विभिन्न हैं। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण—सभी दिशाओंके मनुष्य काशीको लक्ष्य बनाकर चलेंगे तो काशी पहुँच जायँगे, परंतु वे चलेंगे अपनी-अपनी दिशासे तथा अपने-अपने मार्गसे ही। मार्गोंके अनुभव भी उनके पृथक्-पृथक् होंगे। कोई यह चाहे कि पूर्वसे आनेवाला पश्चिमसे आनेवालेके पथसे ही आये तथा उत्तरसे आनेवाला दक्षिणके पथसे ही आये तो जैसे यह चाहना भ्रममूलक है, वैसे ही भगवान्तक—अपने परम लक्ष्यतक पहुँचनेका साधन सबका एक ही हो—यह मानना भी भ्रम है। रुचि, समझ, अन्तःकरणके स्वरूप त्रिगुणोंकी न्यूनाधिकता, पूर्व-संस्कार, वातावरण आदिके अनुसार ही विभिन्न साधन होंगे। अतएव किसी भी भगवत्प्राप्तिके साधनकी न निन्दा करो, न किसीको देखकर लुभाओ। लक्ष्यपर नित्य दृष्टि रखकर अपने पथसे चलते रहो। भगवान् ही जीवनके परम साध्य हैं, इसको क्षणभरके लिये भी न भूलकर नित्य-निरन्तर अपने साधनमें लगे रहो। दूसरे क्या करते हैं, क्या कहते हैं, इसकी ओर न देखकर निरन्तर अपने मार्गपर सावधानीसे आगे बढ़ते रहो।

याद रखो—यदि तुम्हारे जीवनमें दैवी सम्पत्ति बढ़ रही है, मन विषयोंसे हट रहा है, भगवान्के प्रति आकर्षण अधिक हो रहा है, मनमें शान्ति तथा आनन्दकी वृद्धि हो रही है और ये धीमी या तेज जिस चालसे बढ़ रहे हैं तो समझ लो कि तुम उसी मात्रामें उत्तरोत्तर आगे बढ़ रहे हो और यदि तुम्हारे जीवनमें आसुरी सम्पत्ति बढ़ रही है, मन विषयोंकी ओर खिंच रहा है, भगवान्के स्मरणसे हट रहा

है, मनमें अशान्ति तथा चिन्ताकी वृद्धि हो रही है और ये मन्द या तीव्र जिस गतिसे बढ़ रहे हैं तो उसी गतिसे तुम पीछे हट रहे हो, तुम्हारा पतन हो रहा है। अतएव सावधानीके साथ अपने जीवनकी भीतरी स्थितिको देखते रहो। तुम्हारा असलमें वही स्वरूप है, जैसी तुम्हारी भीतरी स्थिति है।

याद रखो—सबसे आवश्यक और सबसे प्रथम करनेयोग्य कार्य है—लक्ष्यका निश्चय। 'भगवान् ही जीवनके परम लक्ष्य हैं'—यह निश्चय करना और फिर इसी लक्ष्यको सामने रखकर जीवनमें प्रत्येक भीतरी-बाहरी क्रिया करना। जीवनका निश्चित लक्ष्य भगवान् होंगे तो तुम्हारा मुख भगवान्की ओर होगा और तुम धीमी या तेज चालसे भगवान्की ओर ही बढ़ते रहोगे; क्योंकि जीवमात्र सब चल ही रहे हैं। कालचक्रमें पड़े हुए नित्य-निरन्तर चलते रहना ही संसारमें जीवका कार्य है। फिर वह चाहे भगवान्के सामने मुख करके उनकी ओर चले या विषयोंको सामने रखकर उनकी ओर!

याद रखो—हिमालयकी तपोभूमिकी ओर जानेवालेको जैसे आगे-से-आगे शीतलता (ठंडक) एकान्तभूमि, त्यागी, साधु-महात्मा तथा शान्ति-सुख आदि मिलेंगे और इसके विपरीत गरम देशमें भोगमय बड़े-बड़े नगरोंकी ओर जानेवालेको उत्तरोत्तर गरमी, भीड़-भाड़, भोगी-विषयी लोग—चोर-ठग-डाकू, अशान्ति, चिन्ता आदिकी प्राप्ति होगी, ठीक वैसे ही भगवान्की ओर जानेवालेको आगे-से-आगे दैवी सम्पत्ति, सत्संगति, विषय-वैराग्य, शान्ति, आत्मानन्द, पवित्र आचार-विचार आदि मिलते रहेंगे और भोगोंकी ओर जानेवालेको आसुरी सम्पदा, कुसंगति, विषयासक्ति, अशान्ति, भोगोंमें आनन्दका भ्रम अपवित्र पाप-कर्मादि, दिन-रातकी जलन आदि प्राप्त होंगे। अतएव अपने-आपको इन लक्षणोंके अनुसार देख-जाँचकर निर्णय कर लो कि तुम किस ओर जा रहे हो और यदि दुःखमय अनित्य भोगोंकी ओर जा रहे हो तो तुम्हारे लिये दुःख तथा पतन निश्चित है, फिर भले ही

तुम बुद्धिमान्, ज्ञानवान्, साधु, भक्त, महात्मा, नेता, अधिकारी, ऐश्वर्यवान्, सुखी क्यों न समझे-कहे जाते हो या अपनेको मानते हो। अतः तुरंत विषयोंकी ओर पीठ करके भगवान्के सामने मुख कर लो।

याद रखो—तुम मनुष्यके रूपमें इस संसारमें इसलिये नहीं भेजे गये हो कि दिन-रात भोग-लिप्सामें लगे रहकर पाप-जीवन बिताओ और पापकर्मोंका संचय बढ़ाकर रोते-कलपते मर जाओ। तुम्हें तो मानवरूप दिया गया है भगवान्की प्राप्तिके साधनमें लगकर पुण्यजीवन बिताते हुए भगवान्को प्राप्त करनेके लिये, मृत्युको मारकर दिव्य नित्य भागवत-जीवनकी प्राप्तिके लिये इस बातको याद रखो और अपनी योग्यता तथा रुचिके अनुसार निर्दोष परमार्थ-साधनको अपनाकर इधर-उधर न ताकते हुए चलते रहो और जीवनके नित्य परम साध्य भगवान्को प्राप्त करके सफलजीवन बन जाओ।

वस्तु और परिस्थितिका सदुपयोग

याद रखो—भगवान्ने तुम्हें जो कुछ भी दिया है, वह लाभ उठानेके लिये है। अतः प्रत्येक वस्तु तथा परिस्थितिका सदुपयोग करके उससे लाभ उठाओ। सबसे अधिक मूल्यवान् वस्तु है—समय। मृत्यु आनेपर एक क्षणका समय भी माँगे नहीं मिलता। अतएव जीवनके एक-एक क्षणका सदुपयोग करो। एक-एक श्वासका समय कल्याणमय कार्यमें लगाओ। समयका सर्वोत्तम सदुपयोग है—आलस्य-प्रमादको छोड़कर भगवान्का मंगलमय स्मरण करते हुए प्रत्येक कर्तव्य-कर्मको भगवान्की पूजा-सेवाके भावसे करना। अनर्थकारी और व्यर्थ साहित्य, सिनेमा, ताश आदि खेल, व्यर्थ निद्रा, व्यर्थ वार्तालाप आदिमें समय लेना उसका दुरुपयोग है। पापकर्मोंमें समय लगाना तो दुरुपयोग ही नहीं है, समयके साथ शत्रुता करके अपने विनाशको बुलाना है।

याद रखो—तुम्हें मन मिला है—भगवच्चिन्तन करने तथा सच्चिन्तनके द्वारा अपना तथा दूसरोंका मंगल सोचनेके लिये। ऐसा करना ही मनका सदुपयोग है और जीवनकी सफलताका साधन है। परंतु तुम इसे यदि विषाद, भय, चिन्ता, वैर, हिंसा, व्यर्थ-चिन्तन, काम-चिन्तन, विषय-चिन्तनमें लगाते हो, पवित्र भावोंके बदले अशुद्ध विचारोंमें संलग्न रखते हो, नियन्त्रणमें न रखकर व्यर्थ-अनर्थके विचारोंमें भटकने देते हो तो तुम इसका दुरुपयोग कर रहे हो।

याद रखो—तुम्हें वाणी मिली है—भगवन्नाम-गुणगानके लिये, स्वाध्यायके लिये, हितपूर्ण-मधुर-सत्य-भाषणके लिये—ऐसे शब्दोंके उच्चारणके लिये जिनसे अपना तथा दूसरोंका कल्याण हो तथा जो शब्द वायुमण्डलमें फैलकर चिरकालतक वातावरणमें शुद्ध प्रेरणा देते रहें। ऐसा करना ही वाणीका सदुपयोग है। इसके विपरीत यदि तुम वाणीके द्वारा असत्य, अहितकारी, उद्वेग उत्पन्न करनेवाले, कटु तथा

अप्रिय शब्दोंका उच्चारण करते हो, परनिन्दा, परचर्चा, परहानि-चर्चा, आत्म-प्रशंसा, सन्निन्दा या व्यर्थकी बातोंमें, दुनियाकी आलोचना-प्रत्यालोचनामें, मिथ्या गप-शपमें लगाते हो तो वाणीका दुरुपयोग करते हो।

याद रखो—तुम्हें धन-सम्पत्ति मिली है, वस्तुएँ मिली हैं—भगवान्‌की सेवाके लिये। जहाँ अभाव है, वहाँ भगवान् उन अभावग्रस्तोंके रूपमें तुमसे धन-सम्पत्ति तथा उन वस्तुओंकी माँगते हैं। तुम उन वस्तुओंको अपनी न मानकर, अपने लिये कम-से-कम शेष सब यथायोग्य अभावग्रस्तोंको आदरपूर्वक प्रदान करनेके रूपमें भगवत्-सेवामें लगा देते हो, तब तो उनका सदुपयोग करते हो और तुम्हारी धन-सम्पत्ति तथा प्राप्त वस्तुओंकी सार्थकता होती है। इससे आत्मप्रसादके साथ तुम्हें भगवत्कृपा प्राप्त होती है। परंतु इसके विपरीत यदि उस धन-सम्पत्तिपर अपना स्वामित्व—अपना अधिकार मानकर उसे अपने ही भोगमें लगाते हो या संग्रह करके ही उसके रक्षणकी चिन्ता करते हुए मर जाते हो तो तुम अपनी बड़ी हानि करते हो; क्योंकि भगवान्‌की वस्तुको अपनी मानकर तुम चोरी करते हो और इस चोरीका दण्ड तुम्हें भोगना पड़ेगा। तुम यदि धन-सम्पत्तिको स्वाद-शौकीनी, विलासिता-फैशन आदिमें, शराब-व्यभिचार, अनाचार-अत्याचार, अभक्ष्य-भक्षण-पान या वैर-हिंसामें लगाते हो तो उसका पूरा दुरुपयोग करते हो—आप ही अपने लिये अनन्त यन्त्रणामय नरकभोगकी योजना बनाते हो। अतः सावधान हो जाओ। पापके कार्योंमें धन-सम्पत्ति या किसी भी वस्तुका उपयोग करो ही मत। अपने जीवननिर्वाहमें भी अत्यन्त सादगीसे उनका कम-से-कम उपयोग करो। बढ़िया बेशकीमती कपड़े न पहनकर कम दामके कपड़े पहनो और पैसोंको बचाकर उनसे अभावग्रस्तोंके लिये वस्त्रोंकी व्यवस्था करो। खान-पानमें सादगी बरतो और शेष पैसोंको अन्नके

अभावसे दुःखी पीड़ित भगवत्स्वरूपोंकी सेवामें—अन्नदानके रूपमें लगाओ। यही सदुपयोग है।

याद रखो—इसी प्रकार तुम्हें जो कान, नाक, आँख, जीभ, त्वक्, इन्द्रियाँ मिली हैं, इनको भी भगवान्‌के साथ जोड़कर तथा इनके द्वारा सेवा करके इनका सदुपयोग करो। दुःख, निन्दा, अपमान, संकट आनेपर उनका भी सदुपयोग यों विचारकर करो कि ये सब हमारे ही किये दुष्कर्मोंके फल हैं। अतएव अब किसी प्रकार भी कोई दुष्कर्म न करके सदा सत्कर्म ही करना है।

महात्मा या महापुरुष कौन?

याद रखो—महात्मा या महापुरुषके लिये यह आवश्यक नहीं है कि उनकी लोकमें प्रसिद्धि हो और लोगोंमें वे महात्मा या महापुरुष कहे-माने जाते हों। वरन् कहे-माने जानेवाले लोक-प्रसिद्ध महात्माओंमें वास्तविक महात्मा बहुत थोड़े होते हैं। महात्मा या महापुरुष वे हैं—जिनको सर्वत्र सब कुछ एकमात्र वासुदेव भगवान् ही दृष्टिगोचर होते हों।

याद रखो—सच्चे महात्मा या महापुरुषकी पहचान बाहरी लक्षणोंसे नहीं होती। वे सांसारिक मोहग्रस्त बुद्धिके तराजूपर वैसे ही नहीं तौले जा सकते, जैसे बड़े-बड़े लकड़े अथवा भारी-भारी पत्थरोंके तौलनेके काँटेपर हीरे नहीं तौले जा सकते। तथापि यह सर्वथा सत्य है कि महात्मा या महापुरुषकी बुद्धि-मन-इन्द्रिय—सब परमात्माके साथ संयुक्त होकर सर्वथा पवित्र हो चुकते हैं। अतएव न तो महात्मा या महापुरुषमें भोगासक्ति होती है, न भोगकामना रहती है और न भोगजगत्में कहीं उनकी ममता ही रहती है। उनकी बुद्धि-मन-इन्द्रियोंसे सहज ही केवल पावन-पावन भगवत्सेवा ही सम्पन्न होती रहती है।

याद रखो—महात्मा या महापुरुषकी दृष्टिमें यह जगत् इस रूपमें रहता ही नहीं। अतएव वे जगत्के द्वन्द्वोंसे सर्वथा अतीत केवल भगवत्स्वरूपमें ही नित्य स्थित रहते हैं। किसी भी सांसारिक हानि-लाभ, दुःख-सुखमें वे कभी विचलित नहीं होते। न उन्हें कभी उद्वेग होता है न हर्ष; न चिन्ता होती है न आकांक्षा; वे सदा सम रहते हैं और सदा ही सहज निर्लिप्त रहते हैं। तथापि सहज ही उनका हृदय बड़ा कोमल होता है। जहाँ वे अपने प्रति दीखनेवाले महान्-से-महान् दुःखमें वज्रादपि कठोर रहते हैं, वहाँ दूसरेके दुःखमें कुसुमादपि कोमल होते हैं। तनिक-से पर-दुःखसे द्रवित हो जाते

हैं और आसक्त पुरुषकी भाँति उसका दुःख दूर करनेमें सचेष्ट हो जाते हैं।

याद रखो—महात्मा या महापुरुषके लिये मानापमानका कोई मूल्य नहीं है, न तो वे मान चाहते हैं, न अपमानसे डरते हैं तथापि वे सहज ही स्वयं मानरहित रहकर दूसरोंको सम्मान देते हैं। जागतिक हिताहितसे सर्वथा परे होनेपर भी वे सहज स्वभावसे पर-हितमें लगे रहते हैं। उनसे किसीका अहित वैसे ही नहीं होता, जैसे अमृतसे कोई मरता नहीं और उनसे सबका हित वैसे ही होता है, जैसे सूर्यसे सबको प्रकाश तथा गरमी मिलती है।

याद रखो—महात्मा या महापुरुष वाणीसे नहीं, अपने जीवनसे जगत्को उपदेश देते हैं; उनकी एक-एक चेष्टा सहज ही सांसारिक दुःखोंके विनाशका साधन बताती है; कुमार्गसे हटाकर सन्मार्गपर लगाती है और महान् कल्याणकी प्राप्ति करानेमें सहायक होती है। उनका मूक व्याख्यान जितना प्रभावशाली होता है, उतना संसारासक्त मानवोंके लाख-लाख कलापूर्ण व्याख्यान नहीं होते। वस्तुतः उनके जीवनमें उतरे हुए उपदेशोंसे केवल वाणीके उपदेशोंकी तुलना ही नहीं हो सकती।

याद रखो—महात्मा या महापुरुषका मिलना बहुत ही दुर्लभ है। मिलनेपर पहचानना बहुत ही कठिन है तथापि उनका मिलना कभी व्यर्थ नहीं जाता। जैसे जाने-अनजाने अग्निका स्पर्श जला देता है और जाने-अनजाने अमृतका स्पर्श अमर कर देता है, वैसे ही जाने-अनजानेमें होनेवाला महात्मा या महापुरुषका मिलन भी पाप-तापको भस्म करनेवाला और अमृतत्वरूप मुक्तिको प्रदान करनेवाला होता है। महात्मा या महापुरुषकी पहचान सहज नहीं होती, पर इतना समझ लेना चाहिये कि जिनके संगसे तुम्हारी भोगासक्ति घटकर भगवान्में अनुराग बढ़ता है, आसुरी सम्पदाका नाश होकर दैवी सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है, भोगोंसे हटकर मन-

बुद्धि भगवान्में रुचिपूर्वक लगते हैं, वे तुम्हारे लिये निश्चय ही महात्मा या महापुरुष हैं।

याद रखो—महात्मा न तो अपने महात्मापनका ढिंढोरा पीटा करते हैं, न विज्ञापन करते हैं। सहज स्वाभाविक ही उनका अस्तित्व जगत्के जीवोंका कल्याण करनेवाला होता है। वे चाहे प्रकट रहें या अप्रकट, लोग उन्हें जानें या न जानें, वे जहाँ होते हैं, वहाँ वैसे ही दैवी सम्पत्ति और भगवद्भावका विस्तार होता है, जैसे सुगन्धित पुष्पोंके बगीचेसे स्वाभाविक सुगन्ध फैलती रहती है।

सबमें निर्दोष भगवान् विराजित

याद रखो—सबके अंदर समरूपसे सर्वथा निर्दोष भगवान् विराजमान हैं। जितने भी दोष हैं, सब बाहरी हैं; स्वरूपगत नहीं हैं। तुम दोष देखोगे तो तुम्हें दोष दिखायी देंगे और भगवान्‌को देखोगे तो भगवान्। व्यवहार बाहरी स्वरूपके अनुसार करनेमें आपत्ति नहीं है, पर वह करो केवल व्यवहारके लिये ही और मन-बुद्धिमें निश्चय रखो कि इस रूपमें स्वयं भगवान् ही अभिव्यक्त हैं।

याद रखो—यदि किसीमें कोई दोष दिखायी देते भी हैं तो वे दोष वस्तुतः हैं ही, ऐसी निश्चित बात नहीं है। सम्भव है तुम्हारी द्वेषदृष्टि ही उसमें दोषकी कल्पना करती हो और यदि दोष हैं भी तो यह भी मत मानो कि वे दोष सदा बने ही रहेंगे। आयी हुई चीज चली भी जायगी ही।

याद रखो—यदि तुम किसीमें केवल दोष ही देखते हो और तुमने यह निश्चय कर रखा है कि ये दोष तो इनमें सदा रहेंगे ही, तो तुम अपना और उसका दोनोंका अहित कर रहे हो; उसमें दोषका आरोप करके तुम अपनी दृढ़ भावनासे उन्हें यथार्थ दोष बनानेमें सहायता करते हो, अपने दृढ़ निश्चयसे उसमें दोषोंके सदा बने रहनेमें सहायता करते हो और दोष दीखनेके कारण सदा उसके प्रति द्वेषबुद्धि रखकर स्वयं जलते और उसे जलाते रहते हो। तुम्हारी द्वेषबुद्धि उसके मनमें भी तुम्हारे प्रति द्वेष पैदा कर देती है। इस प्रकार तुम द्वेषका एक बड़ा दुरूह जाल बना लेते हो और उसमें फँसकर सदा दुःखी रहते हो या एक विशाल विषवृक्ष लगाकर उससे जर्जरित होते रहते हो।

याद रखो—यदि तुम किसीमें दोष न देखकर या गुण देखकर उससे प्रेम करते हो, सदा अपनी मधुर सुधामयी सद्‌भावना देते हो तो अपना और उसका दोनोंका सहज ही हित करते हो। तुम्हारी प्रेमभरी गुणदृष्टि उसमें गुणोंका निर्माण करती है, उन्हें बढ़ाती है और स्थायी

बनाकर उसके जीवनको मधुर सुधापूर्ण सद्‌गुणमय बनानेमें सहायता करती है। यों जब तुम उसका हितसाधन करते हो तो स्वाभाविक ही उसके द्वारा तुम्हारा हितचिन्तन और हितसाधन होता है। यह निश्चय मानो कि तुम दूसरेको जो दोगे, वही अनन्तगुना होकर तुम्हारे पास लौट आयेगा। द्वेष दोगे तो द्वेष, दुःख दोगे तो दुःख, प्रेम दोगे तो प्रेम और सुख दोगे तो सुख!

याद रखो—तुम्हारा वास्तवमें कोई शत्रु नहीं है, तुम्हारे मनमें रहनेवाला शत्रुभाव ही शत्रु है। तुम्हारे प्रति यदि कोई सचमुच ही शत्रुता करता हो, यद्यपि बहुत बार तो यदि कोई शत्रुता करता दीखता है, तो वह तुम्हारी अपने मनमें रही शत्रुभावनासे ही दीखता है। यह निश्चित नहीं है कि वह शत्रुता करता ही हो। परंतु तुम स्वयं उसे अपनी ही भूलसे शत्रु मानकर उसमें शत्रुताके अंकुर उत्पन्न करके उसे शत्रु बना लेते हो और ठीक इसके विपरीत सचमुच शत्रुता करनेवाले शत्रुको भी तुम अपनी प्रेमभरी मैत्रीभावनासे प्रेम-दान करके—सहज ही उसको सुख प्रदान तथा उसका निरहंकार गुप्त हित-साधन करके मित्र बना सकते हो। तुम अपना हित चाहते हो, सुख चाहते हो, अपने लिये अमृत चाहते हो तो बस, सभीका सदा प्रेमपूर्वक हित करते रहो, सभीको सदा प्रेमपूर्वक सुख देते रहो और सभीको सदा अमृत वितरण करते रहो।

याद रखो—तुम्हारा किसीके सम्बन्धमें भी अशुभ निश्चय—अशुभके निर्माणके हेतु तथा सहायक बनकर तुम्हारा और उसका दोनोंका निश्चय ही अहित करेगा और शुभ निश्चय दोनोंका हित करेगा। अतएव सबमें परम मंगलमय, परम शुभस्वरूप भगवान्‌को देखो, सबके अंदर सदा विराजित भगवान्‌को जगाओ, उन्हें पूजो और उनका प्रकाश-विकास करके उसको तथा अपनेको धन्य कर दो और ऐसा करके स्वयं भी परम धन्य हो जाओ।

अनर्थोंका मूल अहंकार

याद रखो—अहंकार ही सारे अनर्थोंका मूल है, अहंकारसे ही ममता तथा राग-द्वेष उत्पन्न होते हैं। 'मैं' है तो 'मेरा' है, 'मेरा' है तो मेरा सुरक्षित रहे और बढ़े, जो मेरा है उसमें राग और जो मेरा नहीं उसमें द्वेष। राग-द्वेष ही काम-क्रोध-लोभ-मोहकी उत्पत्तिमें प्रधान हेतु हैं।

याद रखो—शरीरमें और नाममें 'अहं'-बुद्धि न हो तो शरीरके रहने या न रहनेमें सुख-दुःख क्यों होगा और क्यों निन्दा तथा स्तुतिमें सुख-दुःख होगा। निन्दा 'नामकी' होती है और प्रशंसा भी नामकी। जब मनुष्य निन्दा और प्रशंसामें हानि-लाभ मानता है और दुःख-सुखकी अनुभूति करता है तो मानना चाहिये कि वह अहंकारसे अभिभूत है। अपने आत्मस्वरूपसे वंचित है।

याद रखो—इस अहंकारके कारण ही बुद्धिमान्—वाणीसे आत्माका तत्त्व निरूपण करनेवाले बुद्धिमान् भी मूर्ख हो जाते हैं और अपने-अपने मत-वादके लिये लड़ने-झगड़ने लगते हैं। इस अहंकारजनित अज्ञानके कारण ही स्थूल शरीरकी पूजा और नामकी प्रशंसा चाहते हैं। लोग मेरा चित्र या मूर्ति रखकर पूजा-सम्मान करें, 'मेरा नाम इतिहासमें अमर रहे'—ऐसी आकांक्षा आत्मामें तो होती ही नहीं। यह सारी अज्ञानकी क्रियाएँ होती हैं, अहंकारके कारण ही। बुद्धिमान् मनुष्य भी अपनी प्रशंसात्मक जीवनी लिखना-लिखाना चाहता है, बुद्धिमान् मनुष्य भी गुणप्रशंसाके हेतुभूत अभिनन्दनादि स्वीकार करता है, बुद्धिमान् मनुष्य भी लोकोपकारके नामपर अपने भावोंका प्रचार करता है और बुद्धिमान् मनुष्य भी धन कमाकर उसके द्वारा परोपकारके बहाने नाम-आरामकी आकांक्षा करता है, ये यथार्थ बुद्धिके लक्षण नहीं हैं। तमसाच्छन्न विपरीतदर्शी बुद्धिका ही यह स्वरूप है। इस बुद्धिवाला मनुष्य वास्तवमें बुद्धिमान् नहीं है। आत्मदर्शनकी दृष्टिसे यह वास्तवमें मूर्खता ही है। यह सब अहंकारका ही अवश्यम्भावी दुष्परिणाम है।

याद रखो—इस अहंकारका दमन हुए बिना कभी न तो त्याग होगा, न शक्ति मिलेगी और न मूर्खता ही मिटेगी। अहंकारके नाशके लिये खास तीन उपाय हैं—

(१) अपने तथा जगत्के स्वरूपपर विचार करके अपनी दीनता, असमर्थता और असहायताका परिचय प्राप्त करना, उसे स्वीकार करना और सर्वशक्तिमान् सर्वसमर्थ सर्वज्ञ तथा अहैतुक सुहृद् भगवान्के शरणापन्न होकर उनसे नित्य संयोग कर लेना। अपना सच्चा दैन्य ही अहंकार नाश करनेमें समर्थ है और इसी दैन्यसे समर्थ भगवान्की प्रपत्ति प्राप्त होती है।

(२) विवेक-विचारपूर्वक शरीर तथा नामोंमेंसे अहंकारको निकालकर सबके द्रष्टा आत्मामें उसे स्थिर करना। मैं शरीर नहीं हूँ, नाम नहीं हूँ। इन सबकी सारी क्रियाओंको हर समय जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्तिमें देखनेवाला निरपेक्ष द्रष्टा हूँ। शरीर और नामके हानि-लाभसे मेरा कोई हानि-लाभ नहीं होता और यह द्रष्टा भी एक कल्पना ही है। वास्तवमें एक परमात्मसत्ताके अतिरिक्त और कुछ भी न है, न होता है।

(३) भगवान् ही अपने-आप अपने ही खेलके लिये अपने ही संकल्पसे सृष्टिके तथा सृष्टिके समस्त कार्योंके रूपमें अभिव्यक्त हैं। वही आप नित्य अपने-आप अपनेमें लीला कर रहे हैं। सृजन-संहार, उत्पत्ति-प्रलय सभी उन लीलामयकी लीला है। यहाँ दो ही चीज हैं—लीलामय और उनकी लीला। लीलामय और लीलामें अभेद है; क्योंकि लीलामय ही लीला बने हुए हैं, मैं उनकी लीलाका उन्हींका अपनेसे ही बनाया हुआ एक खिलौना हूँ। वास्तवमें वे ही वे हैं।

याद रखो—इन तीनोंमेंसे किसी एकको अपनाकर अहंकारका नाश करनेका प्रयत्न करना चाहिये। अहंकार ही बन्धन है, अहंकारका नाश ही मुक्ति है।

॥ श्रीहरिः ॥

परम श्रद्धेय श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार (भाईजी)-के अनमोल प्रकाशन

कोड	पुस्तक	कोड	पुस्तक
820	भगवच्चर्चा (ग्रन्थाकार)	355	महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर
050	पदरत्नाकर	356	शान्ति कैसे मिले?
049	श्रीराधा-माधव-चिन्तन	357	दुःख क्यों होते हैं ?
058	अमृत-कण	348	नैवेद्य
332	ईश्वरकी सत्ता और महत्ता	337	दाम्पत्य-जीवनका आदर्श
333	सुख-शान्तिका मार्ग	336	नारीशिक्षा
343	मधुर	340	श्रीरामचिन्तन
056	मानव-जीवनका लक्ष्य	338	श्रीभगवन्नाम-चिन्तन
331	सुखी बननेके उपाय	345	भवरोगकी रामबाण दवा
334	व्यवहार और परमार्थ	346	सुखी बनो
514	दुःखमें भगवत्कृपा	341	प्रेमदर्शन
386	सत्संग-सुधा	358	कल्याण-कुंज
342	संतवाणी—ढाई हजार अनमोल बोल	359	भगवान्की पूजाके पुष्प
347	तुलसीदल	360	भगवान् सदा तुम्हारे साथ हैं
339	सत्संगके बिखरे मोती	361	मानव-कल्याणके साधन
349	भगवत्प्राप्ति एवं हिन्दू-संस्कृति	362	दिव्य सुखकी सरिता
350	साधकोंका सहारा	363	सफलताके शिखरकी सीढ़ियाँ
351	भगवच्चर्चा	364	परमार्थकी मन्दाकिनी
352	पूर्ण समर्पण	366	मानव-धर्म
353	लोक-परलोक-सुधार	526	महाभाव-कल्लोलिनी
354	आनन्दका स्वरूप	367	दैनिक कल्याण-सूत्र
		369	गोपीप्रेम

कोड पुस्तक	कोड पुस्तक
368 **प्रार्थना—प्रार्थना-पीयूष**	381 **दीन-दुःखियोंके प्रति कर्तव्य**
370 **श्रीभगवन्नाम**	379 **गोवध भारतका कलंक एवं गायका माहात्म्य**
373 **कल्याणकारी आचरण**	382 **सिनेमा मनोरंजन या विनाशका साधन**
374 **साधन-पथ**—सचित्र	344 **उपनिषदोंके चौदह रत्न**
375 **वर्तमान शिक्षा**	371 **राधा-माधव-रससुधा-(षोडशगीत)** सटीक
376 **स्त्री-धर्म-प्रश्नोत्तरी**	384 **विवाहमें दहेज—**
377 **मनको वश करनेके कुछ उपाय**	809 **दिव्य संदेश..........**
378 **आनन्दकी लहरें**	
380 **ब्रह्मचर्य**	

गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित कुछ साधन-भजनकी पुस्तकें

052 **स्तोत्ररत्नावली**—सानुवाद	1214 **मानस-स्तुति-संग्रह**
819 **श्रीविष्णुसहस्रनाम—** शांकरभाष्य	1344 **सचित्र-आरती-संग्रह**
207 **रामस्तवराज**—(सटीक)	1591 **आरती-संग्रह**—मोटा टाइप
211 **आदित्यहृदयस्तोत्रम्**	208 **सीतारामभजन**
224 **श्रीगोविन्ददामोदरस्तोत्र**	221 **हरेरामभजन—** दो माला (गुटका)
231 **रामरक्षास्तोत्रम्**	225 **गजेन्द्रमोक्ष**
1594 **सहस्रनामस्तोत्रसंग्रह**	1505 **भीष्मस्तवराज**
715 **महामन्त्रराजस्तोत्रम्**	699 **गंगालहरी**
054 **भजन-संग्रह**	1094 **हनुमानचालीसा—** भावार्थसहित
140 **श्रीरामकृष्णलीला-भजनावली**	228 **शिवचालीसा**
142 **चेतावनी-पद-संग्रह**	232 **श्रीरामगीता**
144 **भजनामृत—** ६७ भजनोंका संग्रह	851 **दुर्गाचालीसा**
1355 **सचित्र-स्तुति-संग्रह**	236 **साधकदैनन्दिनी**